मधुव्रताभं यदि चेच्च चक्षुस्तारासमेतं यदिवा हि कृष्णम् ।
तदा जनन्यां जनने जनस्य दिष्टं वदेद् द्वित्रिघटीप्रमाणम् ॥ ९ ॥

जिसका चक्षु भौंरे के समान वर्णवाला होकर यदि प्रतीत होता हो या तारा समेत कालावर्ण देखपड़ता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय दो घड़ी या तीन घड़ी का कहना चाहिये ॥ ९ ॥

यन्नेत्रतारा परितः सिताढ्या सा केवला वा विशदा सनीला ।
रात्रौ वदेद्वेदघटीप्रमाणं निरूपयेद्बाणघटीमितं वा ॥ १० ॥

जिसके नेत्रकी तारा चारों तरफ़ सफ़ेद होकर प्रतीत होती हो या केवल नीलवर्ण होकर सफ़ेद ही देखपड़ती हो तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में चार या पांच घड़ी का कहना चाहिये ॥ १० ॥

यल्लोचनस्था खलु चार्धनीला तारा भवेद्वै ससिता सपीता ।
प्रातर्वदेच्छास्त्रघटीमितं वा प्रकाशयेत्सप्तघटीप्रमाणम् ॥ ११ ॥

जिसके लोचनों में टिकी हुई तारा आधी नीलवर्णवाली होकर सफ़ेद या पीली प्रतीत होती हो तो उस प्राणी का जन्मसमय प्रातःकाल छः घड़ी या सात घड़ी का कहना चाहिये ॥ ११ ॥

यस्याक्षितारामणिरेव नीलो ह्येको हि मिश्रो मणिभागको वा ।
रात्रौ वदेदष्टघटीप्रमाणं निरूपयेन्नन्दघटीमितं वा ॥ १२ ॥

जिसके नेत्र की तारामणि ही नीलवर्ण होकर प्रतीत होती हो या केवल मणिभागही मिलेवर्णवाला होकर प्रतीत होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में आठ घड़ी या नव घड़ी का कहना चाहिये ॥ १२ ॥

चक्षुः समस्तं खलु नीलवर्णं क्षुद्रं सुचिह्नं यदि वा समीपे ।
रात्रौ वदेद्दिग्घटिकाप्रमाणं तथादिशेदीशघटीमितं वा ॥ १३ ॥

जिसका सारा नेत्र कालावर्ण होकर प्रतीत होता हो या नेत्र के समीप छोटे २ से चिह्न प्रतीत होते हों तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में दश घड़ी या ग्यारह घड़ी का बताना चाहिये ॥ १३ ॥

नेत्रं यदेषद्धरितं च यस्य दिष्टं वदेत्सूर्यघटीमितं वै ।
अर्धं पलाशं यदिवार्धनीलं कालं वदेद् द्व्येकघटीमितं वा ॥ १४ ॥

जिसका नेत्र कुछेक हरासा प्रतीत होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय बारह घड़ी

का कहना चाहिये या जिसका नेत्र आधा हरा या आधा कालावर्ण होकर प्रतीत होता हो तो उसका जन्मसमय एक घड़ी या दो घड़ी का कहना चाहिये ॥ १४ ॥

ईषत्पलाशं मलिनं च यस्य विलोक्यते चेन्मनुजस्य चक्षुः ।
दिवा वदेद् वह्निघटीप्रमाणं निरूपयेद्वेदघटीमितं वा ॥ १५ ॥

जिसका नेत्र कुछेक हरा या मैलासा देखा जाता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय दिन में तीन या चार घड़ी का निरूपण करना चाहिये ॥ १५ ॥

नेत्रस्य तारामणिरेव नीलो विदृश्यते वा हरितोऽपराह्णे ।
ब्रूयात्तदा बाणघटीप्रमाणं बुधो वदेच्छास्त्रघटीमितं वा ॥ १६ ॥

जिसके नेत्रकी तारामणिही नील या हरितवर्ण होकर देखी जाती हो तो उस प्राणी का जन्मसमय पण्डितको अपराह्ण में पांच या छः घड़ी का बताना चाहिये ॥ १६ ॥

बिडालनेत्रप्रतिमं च चक्षुः प्रतीयते यस्य जनस्य नूनम् ।
रात्रौ वदेत्सप्तघटीप्रमाणं विचारयेन्नागघटीमितं वा ॥ १७ ॥

जिसका नेत्र बिलार की आंखों के समान प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में सात या आठ घड़ी का विचारना चाहिये ॥ १७ ॥

मार्जारदृष्टिप्रभमेव चक्षुः संरक्तमध्यं यदिवा विभाति ।
रात्रौ नदेन्नन्दघटीप्रमाणं विज्ञो वदेद्दिग्घटिकामितं वा ॥ १८ ॥

जिसकी आंख बिलार की आंखों के समान कान्तिवाली होकर सोहती हो या आंख का बिचला भाग लालवर्णवाला होकर सोहता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय विद्वान् को नव या दश घड़ी का बताना चाहिये ॥ १८ ॥

आरक्तवर्णं यदिवा हि कृष्णं प्रतीयते यस्य नरस्य नेत्रम् ।
रात्रौ वदेदीशघटीप्रमाणं विचार्य सर्वं हृदये निदेशम् ॥ १९ ॥

जिसका नेत्र लाल या कालावर्ण होकर प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय पण्डित को सारा निदेश हृदय में विचारकर ग्यारह घड़ी का कहना चाहिये ॥ १९ ॥

अथ चिह्नद्वारा जन्मलग्नमाह—

नार्या यदा वा पुरुषस्य भाले संदृश्यते चेद्विशदं च चिह्नम् ।
दशांशमध्ये खलु मेषकस्य जन्मं वदेत्तस्य जनस्य नूनम् ॥ २० ॥

---

१ घटीत्रयम् २ कथयेत् ३ पञ्चघटीप्रमाणम् ४ पण्डितः ॥

जिस नारी या पुरुष के ललाट में साफ़ सुथरा निशान यदि देखा जाता है तो उस प्राणी का जन्म मेषलग्नगत दश अंशों के बीच में यानी पहले द्रेष्काण में कहना चाहिये ॥ २० ॥

भाले विशाले वदने[1] च नेत्रे दक्षाक्षिनिम्ने ह्यथवोर्ध्वभागे ।
ओष्ठोच्चदेशे यदि भाति चिह्नं कलायसाम्यं[2] बहुलोमशं वा ॥ २१ ॥

विशालभाल, मुख, वामनेत्र, दाहने नेत्र का निचला भाग अथवा ऊपरला भाग और ओठों का ऊर्ध्व भाग इनमें यदि मटर समान या घने लोमोंवाला निशान सोहता हो ॥ २१ ॥

दशांशमारभ्य नखांशमध्ये[3] मेषस्य ज्ञेया जनिरेव[4] जन्तोः ।
अधःस्थले वै वदनस्य यस्य विभाति चिह्नं चिबुकेऽथ वा स्यात् ॥ २२ ॥

तो उस प्राणी का जन्म मेष लग्न के दश अंश से लेकर बीस अंश के बीच में जानना चाहिये और जिस प्राणी के मुख के निचले भाग में अथवा ठोढ़ी में निशान सोहता हो ॥ २२ ॥

नखांशमारभ्य तदैडकस्य[5] त्रिंशांशमध्ये पुरुषस्य जन्म ।
वदन्ति विप्राः खलु शास्त्रनिष्ठाः साँव्वत्सरा[6] वेदविदां वरेण्याः ॥ २३ ॥

तो शास्त्रों में निष्ठा रखते हुए वेदवेत्ताओं में प्रधान होकर ज्योतिर्वेत्ता ब्राह्मणों ने मेष लग्नगत बीस अंश से लेकर तीस अंश के भीतर उस प्राणी का जन्म कहा है ॥ २३ ॥

रीत्या यदानीं खलु सूक्ष्मया चेद्विचारणां कर्तुमिहाभिवाञ्छेत् ।
आरभ्य भालाच्चिबुकान्तमेवं कुर्यात्तु भागत्रयमेव धीरः ॥ २४ ॥

जबकि पण्डितलोग सूक्ष्म रीति से विचार करना चाहें तो भाल से लेकर ठोढ़ी पर्यन्त तीन भाग करें ॥ २४ ॥

आद्यं च भागं प्रवदेद्दिगंशं विंशांशतुल्यं खलु युग्मभागम् ।
त्रिंशांशसाम्यं प्रवदेत्त्रिभागं विज्ञाय चेत्थं क्रियतां विचारः ॥ २५ ॥

दश अंशवाला पहला भाग बीस अंशवाला दूसरा भाग और तीस अंशवाला तीसरा भाग कहना चाहिये इस भांति जानकर विचार किया जावे ॥ २५ ॥

होरादिकान्वै सकलान्विचार्य ब्रूयात्फलादेशमिहैव धीमान् ।
ध्यात्वा हि रामं कुजया समेतं न तं विना को भणितुं समर्थः ॥ २६ ॥

होरा–द्रेष्काण–नवांशा आदि समस्त षड्वर्गों का विचार कर बुद्धिमान् फलादेश को

---

१ मुखे २ मटरप्रमाणम् ३ विंशांशमध्ये ४ उत्पत्तिः ५ मेषलग्नस्य ६ ज्योतिर्वेत्तारः ॥

कहे और यहां पर सीताराम का ध्यान धर कहना उचित है क्योंकि उनके विना कोई कहने के लिये समर्थ नहीं होसक्ता है ॥ २६ ॥

कण्ठप्रदेशे यदि भाति चिह्नं क्षुद्रस्वरूपं यदिवा हि कोलम् ।
संरक्तवर्णं यदिवा बिडालं जनिं वदेदुक्षदिगंशमध्ये ॥ २७ ॥

यदि कण्ठभाग में छोटासा या बेर के बराबर निशान सोहता हो अथवा लाल बिलार के समान आकारवाला निशान यदि भासता हो तो वृषलग्नगत दश अंशों के बीच में जन्म कहना चाहिये ॥ २७ ॥

गलैकदेशे यदि भाति चिह्नं प्रागुक्तरूपं ह्यथवा किमन्यत् ।
द्रेष्काणयुग्मे वृषलग्नकस्य ब्रूयाज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ २८ ॥

यदि कण्ठ के एक देश में पूर्वोक्त निशान अथवा कोई आनही निशान सोहता हो तो वृषलग्नगत दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ २८ ॥

कण्ठोपरिस्थं जलबुद्बुदाभं किंवा सरक्तं पिटकासमानम् ।
त्रिंशांशमध्ये वृषलग्नकस्य विद्याज्जनुर्वै पुरुषस्य तस्य ॥ २९ ॥

यदि कण्ठके ऊपरले भाग में टिका हुआ जल बुल्ले के समान या लाल फोड़े के समान निशान सोहता हो तो वृषलग्नगत तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ २९ ॥

विद्योतते चेत्खलु दक्षबाहौ स्कन्धद्वये वा यदि भाति चिह्नम् ।
दशांशमध्ये मिथुनस्य यस्य जनिं वदेत्तस्य नरस्य नूनम् ॥ ३० ॥

जिसकी दाहिनी भुजा या दोनों कन्धों में यदि कोईसा निशान प्रतीत होता हो तो मिथुन लग्नगत दश अंशों के बीच में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३० ॥

विभाति चिह्नं यदि वामबाहौ तथांसयोर्वा निकटे विभाति ।
द्रेष्काणयुग्मे खलु युग्मकस्य ब्रूयाज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥ ३१ ॥

यदि बाईं भुजा या कन्धों के समीपवर्ती निशान सोहता हो तो मिथुनलग्नगत दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३१ ॥

मध्ये यदानीं खलु दक्षबाहोर्विराजते चेद्विशदं च चिह्नम् ।
विंशांशतो वै शरविंशभागे युग्मस्य जन्मं प्रवदेज्जनस्य ॥ ३२ ॥

---

१ विस्फोटः पिटकास्त्रियु २ जानीयात् ३ मिथुनस्य ४ पञ्चविंशांशभागे ॥

जिसकी दाहिनी भुजा के बीच में साफ़ सुथरा निशान प्रतीयमान होता हो तो मिथुन लग्नगत बीस अंश से लेकर पच्चीस अंश के भीतर उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ३२ ॥

विद्योतते चेत्खलु वामबाहोर्मध्ये सुचिह्नं विशदं च यस्य ।
आरभ्य विंशं सशरं तदानीं त्रिंशांशमध्ये मिथुनस्य जन्म ॥३३॥

जिसकी बाईं भुजा के बीच में यदि कोईसा निशान सोहता हो तो मिथुन लग्नगत बीस अंश से लेकर तीस अंश के भीतर उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३३ ॥

वक्षःस्थले चेच्छशकाङ्घ्रिसाम्यं चिह्नं सपुष्पं ससितं विभाति ।
आद्ये दृकाणे खलु कर्कटस्य जनिं वदेद् बुद्धिवरो जनस्य ॥३४॥

जिसके वक्षःस्थल में यदि खरगोश के पैर के समान या फूल के समान सफ़ेद निशान सोहता हो तो कर्क लग्नगत पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ३४ ॥

चिह्नं यदा चेत्कुचयोः[2] समीपे कोलस्वरूपं कुसुमप्रभं वा ।
दशांशमारभ्य नखांशमध्ये[3] कर्कस्य जन्मं प्रवदेज्जनस्य ॥ ३५ ॥

जिसके स्तनों के निकट देश में यदि बेर के समान या फूल के समान निशान सोहता हो तो कर्क लग्नगत दश अंश से लेकर बीस अंशों के भीतर उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३५ ॥

उरोजनिम्ने यदि भाति चिह्नं पुष्पप्रभं वा खलु फेनिलाभम्[4] ।
वह्नौ[5] दृकाणे सति कर्कटस्य धीरो[6] वदेज्जन्म जनस्य तस्य ॥ ३६ ॥

जिसके स्तनों के निचले भाग में यदि फूल के समान या बेर के समान निशान सोहता हो तो कर्क लग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ३६ ॥

वत्सोपरिस्थं यदि वामगं चेच्चिह्नं विशुद्धं नितरां विभाति ।
आद्ये दृकाणे मृगराजकस्य ब्रूयाज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥ ३७ ॥

यदि वामभाग में गया व वक्षःस्थल के ऊपर टिका हुआ विशुद्ध होकर चिह्न अतीव चमकता हो तो सिंहलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ३७ ॥

वत्सस्य निम्ने यदि भाति चिह्नं प्रागुक्तरूपं ह्यथवा किमन्यत् ।

---

१ पञ्चभिः समेतम् २ स्तनयोर्निकटे ३ विंशांशमध्ये ४ बदरसन्निभम् ५ तृतीये ६ पण्डितः ॥

युग्मे दृकाणे खलु सिंहकस्य विचारयेद्धै जननं जनस्य ॥ ३८ ॥

यदि वक्षःस्थल के निचले भाग में पूर्वोक्त चिह्न अथवा आनही कोईसा चिह्न सोहता हो तो सिंहलग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म विचारना चाहिये ॥ ३८ ॥

संप्रेक्ष्यते चेत्खलु पार्श्वभागे सातीलकाभं यदि वा कुरूपम् ।
कण्ठीरवस्यान्तिमिके दृकाणे जनिं प्रतीयात्पुरुषस्य तस्य ॥ ३९ ॥

पार्श्वभाग में यदि मटरसमान या छोटासा निशान देखा जाता हो तो सिंहलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ३९ ॥

मध्योदरे वा कुचयोः समीपे बिन्दुस्वरूपं यदि नीलरक्तम् ।
आद्ये दृकाणे खलु कन्यकाया धीरो वदेद्धै जननं जनस्य ॥ ४० ॥

जठर (पेट) के बीच में या स्तनों के निकट देश में काला या लाल बिन्दुरूप धारी निशान प्रकाशमान होता हो तो कन्यालग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४० ॥

कुचोदरे चेद्यदि नीचदेशे रक्तं सनीलं खलु बिन्दुयुक्तम् ।
युग्मे दृकाणे सति कन्यकाया विद्याज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ ४१ ॥

यदि स्तन या पेटके निचले भाग में लाल या काले रंगवाला होकर बिन्दुयुक्त होता हुआ निशान सोहता हो तो कन्यालग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ४१ ॥

तुन्दस्य निम्ने यदिवा सुनाभ्याश्चिह्नं किमन्यद्विशदं विभाति ।
वह्नौ दृकाणे सति कन्यकाया ब्रूयाज्जनुर्वै खलु मानवस्य ॥ ४२ ॥

यदि तोंद (पेट) या तोंदी (तुण्डी) के निचले भाग में कोईसा आनही निशान सोहता हो तो कन्यालग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ४२ ॥

नाभौ कटौ वा यदि लोमयुक्तं क्षुद्रस्वरूपं मृदुतासमेतम् ।
आद्ये दृकाणे खलु तौलिकस्य विद्याद्विदीशो मनुजस्य जन्म ॥ ४३ ॥

यदि तोंदी या कमर में लोमसंयुक्त होकर कोमल होता हुआ छोटासा निशान भासता हो तो तुलालग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को जानना चाहिये ॥ ४३ ॥

---

१ तृतीये २ जानीयात् ३ स्तनयोः ४ प्रथमे ५ जन्मशब्दो नान्तोऽदन्तो वेति कोषादवगम्यते ॥

प्रागुक्तचिह्नं यदि वामगं चेद्विभाति शुद्धं खलु नाभिनिम्ने ।
युग्मे दृकाणे सति तौलिकस्य बुधो वदेज्जन्म जनस्य तस्य ॥ ४४ ॥

यदि पूर्वोक्त निशान वामभाग में गया हुआ निर्मल होकर नाभी के निचले भाग में सोहता हो तो तुला लग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४४ ॥

आलोच्यते चेदुदरस्य प्रान्ते चिह्नं सनीलं बहुलोमशं वा ।
वह्नौ दृकाणे सति तौलिकस्य जनिं वदेत्तस्य जनस्य सूरिः ॥ ४५ ॥

यदि उदर के प्रान्तभाग में काला या घने लोमोंवाला निशान देखा जाता हो तो तुला लग्नगत तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४५ ॥

श्रोणीप्रदेशस्य तु वामभागे विभाति चिह्नं विशदस्वरूपम् ।
आद्ये दृकाणे खलु वृश्चिकस्य विद्याज्जनिं वै पुरुषस्य तस्य ॥ ४६ ॥

यदि कमर के वामभाग में निर्मल होकर निशान सोहता हो तो वृश्चिक लग्नके पहले द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म जानना चाहिये ॥ ४६ ॥

कटप्रदेशस्य च दक्षभागे कर्लोयसाम्यं खलु भाति चिह्नम् ।
युग्मे दृकाणे सति वृश्चिकस्य ब्रूयाज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ ४७ ॥

यदि कमरके दाहिने भागमें मटरसमान निशान प्रतीयमान होता हो तो वृश्चिकलग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ४७ ॥

अपाननिम्ने यदि भाति चिह्नं हरेणुरूपं विमलस्वरूपम् ।
वह्नौ दृकाणे सति वृश्चिकस्य वदेद् बुधेशो जननं जनस्य ॥ ४८ ॥

यदि गुदाके निचले देशमें मटरसमान होकर निर्मल निशान प्रतीयमान होता हो तो वृश्चिकलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म बुधवरको बताना चाहिये ॥ ४८ ॥

वामोरुसंस्थं विशदस्वरूपं विभाति चिह्नं जलबुद्बुदाभम् ।
आद्ये दृकाणे खलु चापकस्य जनिं वदेद्बुद्धिवरो जनस्य ॥ ४९ ॥

यदि बाईं ऊरु में टिका हुआ निर्मल होकर जलबुल्ले के समान निशान सोहता हो तो धनलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४९ ॥

---

१ संप्रेक्ष्यते २ पण्डितः ३ निर्मलरूपम् ४ मटरप्रमाणम् ५ गुदाया नीचभागे ६ मटरसमानम् ७ कथयेत् ८ धनुर्लग्नस्य ॥

दक्षोरुसंस्थं विमलस्वरूपं प्रागुक्तचिह्नं नियतं विभाति ।
युग्मे दृकाणे हि धनुर्धरस्य ब्रूयाज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥ ५० ॥

यदि दाहिनी ऊरु में टिका हुआ निर्मल होकर पूर्वोक्त निशान निश्चयकर सोहता हो तो धन लग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस मानुष का जन्म कहना चाहिये ॥ ५० ॥

ऊरुद्वयस्यापि च तूर्ध्वभागे चिह्नं यदानीं विशदं विभाति ।
वह्नौ दृकाणे खलु कार्मुकस्य समुद्भवं वै कथयेज्जनस्य ॥ ५१ ॥

यदि दोनों ऊरुओं के ऊपरले भाग में निर्मल होकर निशान सोहता हो तो धनलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ५१ ॥

उच्चस्थले चेत्खलु दक्षजानोरनुच्चताराससमेव भाति ।
आद्ये दृकाणे सति नक्रकस्य विद्याज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥५२॥

यदि दाहिने घुटनू के ऊपरले भाग में उँचाई रहित ताराके समान निशानही सोहता हो तो मकरलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ५२ ॥

ऊर्ध्वस्थले चेत्खलु वामजानोः प्रागुक्तचिह्नं विशदं विभाति ।
युग्मे दृकाणे मकरस्य पुंसो ब्रूयाज्जनिं बुद्धिमतामधीशः ॥ ५३ ॥

यदि बायें घुटनूके ऊपरले भागमें पूर्वोक्त निशान निर्मल होकर सोहता हो तो मकरलग्नके दूसरे द्रेष्काण में उस पुरुषका जन्म बुधेन्द्रों को बताना चाहिये ॥ ५३ ॥

अष्ठीवतश्चेत्खलु निम्नदेशे प्रागुक्तचिह्नं यदि भाति शुद्धम् ।
वह्नौ दृकाणे सति नक्रकस्य विद्याद् बुधेशो जननं जनस्य ॥ ५४ ॥

यदि जानुओं के निचलेभाग में पूर्वोक्त निशान शुद्ध होकर सोहता हो तो मकरलग्न तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बुधेशों को जानना चाहिये ॥ ५४ ॥

उच्चप्रदेशे खलु दक्षजङ्घा दीर्घं त्वनुच्चं भजते हि भङ्गम् ।
आद्ये दृकाणे सति कुम्भकस्य विज्ञो वदेद्वै पुरुषस्य जन्म ॥ ५५ ॥

यदि दाहिनी जांघ ऊपरले भागमें फैलाहुआ उच्चतारहित तरङ्गाकार निशानको भजती हो तो कुम्भलग्नगत पहले द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म विज्ञोंको बताना चाहिये॥५५॥

वामा सुजङ्घा खलु चोर्ध्वभागे प्रागुक्तचिह्नं लभते यदानीम् ।
युग्मे दृकाणे घटलग्नकस्य विद्याज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ ५६ ॥

---

१ धनुषः २ मकरस्य ३ निर्मलम् ४ पुरुषस्य ५ नीचभागे ६ मकरस्य ७ तरङ्गाकारम् ८ कुम्भलग्नस्य ॥

यदि बाईं जङ्घा ऊपरले भाग में पूर्वोक्त निशान को पाती हो तो कुम्भलग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ५६ ॥

जङ्घाद्वयस्योपरिगं विभाति चिह्नं यदानीं बदरप्रमाणम् ।
वह्नौ दृकाणे सति कुम्भकस्य ब्रूयाज्जनुर्वै खलु मानुषस्य ॥ ५७ ॥

यदि दोनों जङ्घाओं के ऊपरले भाग में बेरके प्रमाण निशान सोहता हो तो कुम्भ लग्नके तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म कहना चाहिये ॥ ५७ ॥

अनुन्नतं चेद्यदि मांसलग्नं चोद्भाति चिह्नं खलु वामपादे ।
आद्ये दृकाणे सति मीनकस्य वदेत्सुधीरो जननं जनस्य ॥ ५८ ॥

यदि उँचाई रहित मांस में लगाहुआ निशान वामपाद के ऊपरले भाग में सोहता हो तो मीनलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म सुधीरको कहना चाहिये ॥ ५८ ॥

ऊर्ध्वस्थले चेद्यदि दक्षपादे प्रागुक्तचिह्नं विशदं विभाति ।
युग्मे दृकाणे पृथुलोमकस्य जनिं विपश्चित्प्रवदेज्जनस्य ॥ ५९ ॥

यदि दाहिने पादके ऊपरले भागमें पूर्वोक्त निशान निर्मल होकर सोहता हो तो मीन लग्नके दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म पण्डितको बताना चाहिये ॥ ५९ ॥

अधःस्थलस्थं पदयोर्यदानीं संप्रेक्ष्यते चेद्विशदं च चिह्नम् ।
वह्नौ दृकाणे झषलग्नकस्य ब्रूयाज्जनुर्बुद्धिवरो जनस्य ॥ ६० ॥

यदि दोनों पैरों के निचले भाग में टिकाहुआ साफ़ सुथरा होकर निशान देखा जाता हो तो मीनलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बुद्धिमान् को कहना चाहिये ॥ ६० ॥

भाले मुखे वा यदि लक्ष्म मेषं वृषं च कण्ठे मिथुनं च बाह्वोः ।
कर्कं च चित्ते जठरे च सिंहं कट्यां च कन्यां कथयन्ति धीराः ॥ ६१ ॥

यदि ललाट या मुख में कैसाही निशान प्रतीयमान होता हो तो मेष व कण्ठ में हो तो वृष और भुजाओं में हो तो मिथुन तथा हृदय में हो तो कर्क व पेट में हो तो सिंह और यदि कमर में हो तो कन्या जन्मलग्न धीरों ने कहा है ॥ ६१ ॥

नाभेरधःस्थं प्रवदेत्तुलाख्यं गुह्यप्रदेशे खलु वृश्चिकाख्यम् ।
ऊरुस्थलस्थं धनुरेव विद्याज्जानुस्थितं वै मकरं बुधेशः ॥ ६२ ॥

---

१ बेरीफलसमानम् २ मीनलग्नस्य ३ पण्डितः ४ मीनस्य ॥

यदि नाभी के निचले भाग में टिका हुआ निशान प्रतीयमान होता हो तो जन्मलग्न तुला कहना चाहिये और यदि गुह्यप्रदेश में निशान हो तो वृश्चिक व ऊरुओंमें हो तो धनलग्न व घुटनुओं में हो तो मकरलग्न बुधवरों को जानना चाहिये ॥ ६२ ॥

जङ्घास्थितं वै कथयन्ति कुम्भं पादस्थितं चेत्खलु मीनमाहुः ।
स्थूलां सुरीतिं हृदये निधाय व्याख्यायि लग्नं जनुषो जनानाम् ॥६३॥

यदि जांघों में टिका हुआ निशान सोहता हो तो पण्डितों ने कुम्भ को जन्मलग्न कहा है और यदि पादतलों में टिकाहुआ चिह्न भासता हो तो आचार्यों ने मीन को जन्मलग्न बतलाया है इस भांति स्थूलरीति को हृदय में धारण कर जनों का जन्मलग्न कहा गया ॥ ६३ ॥

अथ भालस्थमेषादिस्वरूपज्ञानमाह—

चिह्नं यदानीं विशदाङ्कुशाभं प्रोक्तं पुराणैः खलु मेषकस्य ।
वेदाङ्कसाम्यं वृषभस्य चिह्नं गायन्ति विप्रा वरबुद्धिमन्तः ॥ ६४ ॥

यदि निर्मल अङ्कुश के समान निशान सोहता हो तो उसे पुराने पण्डितों ने मेष लग्न का चिह्न कहा है और बुद्धिवर ब्राह्मणोंने वृषलग्न का चिह्न चार अङ्कके समान गायाहै॥६४॥

कोणेन युक्तं सरलं द्विरेखं युग्मस्य चिह्नं कविभिः प्रयुक्तम् ।
सप्ताङ्कयुग्मं यदि व्यस्तरूपं प्रकाशितं वै खलु कर्कटस्य॥ ६५ ॥

कोण से युक्त सीधा दो रेखाओंवाला मिथुन का चिह्न कवियों ने कहा है और यदि सात अङ्क का जोड़ा उलटे रूप से प्रतीत होता हो तो उसे कर्कलग्न का चिह्न पण्डितों ने प्रकाशित किया है ॥ ६५ ॥

ऋमातृकायुक्तपदं यदानीं विद्योतते चेत्खलु वृत्तकायम् ।
सिंहस्य चिह्नं विशदीकृतं वै साँवत्सरैर्वेदविदां वरिष्ठैः ॥ ६६ ॥

यदि ऋकारकी मात्रा से जुड़े हुए पैरोंवाला वृत्ताकार निशान सोहता हो तो उसे वेदवेत्ताओं में प्रधान, ज्योतिर्वेत्ता लोगों ने सिंह का चिह्न प्रकट किया है ॥ ६६ ॥

यन्पीस्वरूपं सरलं विशुद्धं प्रोक्तं हि चिह्नं खलु बालिकायाः ।
नीचप्रदेशे कुटिलैकरेखं विज्येनयुक्तं धनुषा यदोर्ध्वे[1] ॥ ६७ ॥

सीधा व साफ़ यन्पी के समान रूपवाला कन्या का चिह्न पण्डितों ने कहा है और जिसके निचले देश में टेढ़ी एक रेखा हो व ऊपरले भाग में रोदारहित धन्वाकार निशान सोहता हो ॥ ६७ ॥

---

१ ऊर्ध्वभागे विगुणेन धनुषा समेतम् ॥

वदन्ति चिह्नं खलु तौलिकस्य [illegible] यमस्वरूपं द्रुणिकस्य [illegible] ज्ञेयम् ।
खर्जूरशाखासममेव रूपं चापस्य चिह्नं [illegible] भणितं प्रवीणैः ॥ ६८ ॥

तो उसे तुला का [illegible] चिह्न कहते हैं और [illegible] यम के स्वरूपवाला वृश्चिक का निशान जानना चाहिये और जिसका रूप खजूर की शाखा समानही भासता हो तो उसे पण्डितों ने [illegible] धनलग्न का चिह्न कहा है ॥ ६८ ॥

[illegible]नीपीस्वरूपं कवयो वदन्ति नक्रस्य चिह्नं गदितं सुधीभिः ।
वक्रं द्विरेखं खलु कुम्भकस्य [illegible] षट्त्रिंशसाम्यं पृथुलोमकस्य ॥ ६९ ॥

[illegible]वीपी समान रूपवाला पण्डितोंसे कहा हुआ मकर का चिह्न पण्डितोंने कहा है [illegible] टेढ़ी दो रेखाओंवाला कुम्भ का चिह्न कहाहै और [illegible] छत्तीस अङ्क सम रूपवाला निशान मीन लग्न का कहा जाता है ॥ ६९ ॥

एतानि चिह्नानि मयोदितानि मेषादिकानां खिलराशिकानाम् ।
विज्ञाय चेत्थं सुधिया विचार्यं शुभाशुभं वै मनुजस्य नूनम् ॥ ७० ॥

मेष आदि समस्त राशियों के ये चिह्न मैंने कहे हैं इस भांति उन सबों को जानकर मानवगणों का शुभाशुभ पण्डितों को विचारना चाहिये ॥ ७० ॥

अथ भाले मेषादिवासज्ञानमाह—

भालोच्चदेशे वसतीह कर्को मध्यस्थले वै वृषभो विभाति ।
दक्षभ्रुकुट्यां भ्रमतीह सिंहो वामभ्रुकुट्यां खलु कुम्भकोऽपि ॥ ७१ ॥

ललाट के ऊपरले भाग में कर्क बसता है व भाल के मध्यभाग में वृष सोहता है व दाहिनी भौंह पर सिंह घूमता है और बाईं भौंह पर कुम्भ रहता है ॥ ७१ ॥

दक्षाम्बकोर्ध्वे धनुरेव भाति दक्षश्रुतोर्ध्वे घटको विभाति ।
वामश्रुतोर्ध्वे मिथुनं च मेषो नासोच्चदेशे खलु वृश्चिकोपि ॥ ७२ ॥

दाहिने नेत्र के ऊपरले भाग में धनही विराजता है व दाहिने कान के ऊर्ध्वभाग में तुला सोहती है व बायें कान के ऊपरले भाग में मिथुन और मेष भासता है और नासिका के ऊर्ध्वदेश में वृश्चिक रहता है ॥ ७२ ॥

दक्षे तु गण्डे वसतीह बाला वामे च गण्डे खलु मीनकोऽपि ।
नक्रस्थितो वै चिबुकोर्ध्वदेशे वासो हि ज्ञेयोऽखिलराशिकानाम् ॥ ७३ ॥

---

१ खर्जूरशाखासदृशं यदानीमिति वा पाठः २ मकरस्य ३ मीनस्य ४ कथितानि ५ ललाटोर्ध्वदेशे ६ दक्षिणभ्रुकुटौ ७ दक्षिणनेत्रोर्ध्वे ॥

दाहिने गाल पर कन्या सोहती है और बायें गाल पर मीन और ठोढ़ी के ऊपरले भाग में वृश्चिक टिका रहता है यह समस्त राशियों का वास जानना चाहिये ॥ ७३ ॥ (देखो चित्र नं० १)

अथ रव्यादिग्रहाणां स्वरूपज्ञानमाह—

वृत्तस्वरूपं खलु बिन्दुमध्यं मार्तण्डचिह्नं मुनयो वदन्ति।
चापानुरूपं विशदस्वरूपं चन्द्रस्य चिह्नं गदितं सुधीभिः ॥७४॥

मध्य में बिन्दुवाला वृत्ताकार सूर्य का चिह्न मुनियों ने कहा है और निर्मलरूप धन्वाकार चन्द्रमा का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ७४ ॥

शीर्षत्रिशाखं क्षितिजस्य चिह्नं ठस्यानुरूपं कवयः कुवन्ति।
धनाङ्कयुक्तं खलु वृत्तमध्यं मस्तद्विशाखं भणितं बुधस्य ॥ ७५ ॥

शीश में तीन शाखाओंवाला ठकार के अनुरूप मङ्गल का चिह्न कवियों ने कहा है और धनाङ्क से युक्त व बीच में गोलाकार होता हुआ मस्तक में दो शाखाओंवाला बुध का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ७५ ॥

रेखाविभिन्नं विशदस्वरूपं युग्माङ्कसाम्यं धिषणस्य चिह्नम्।
धनाङ्कयुक्तं यदि नीचदेशे सुवृत्तकायं खलु भार्गवस्य ॥ ७६ ॥

सरल रेखा से कटाहुआ साफ़ दो अंकके समान रूपवाला निशान बृहस्पति का चिह्न कहा जाता है और यदि निचले भाग में धनाङ्क से युक्त होकर गोलाकार निशान प्रतीत होता हो तो उसे शुक्र का चिह्न कहते हैं ॥ ७६ ॥

इकारसाम्यं विशदस्वरूपं चिह्नं संतोक्तं रविजस्य नूनम्।
विज्ञाय रूपं निखिलग्रहाणां संस्थापयेद्वै वदने बुधेशः ॥ ७७ ॥

विशुद्धरूप इकार के समान आकारवाला शनैश्चर का चिह्न पण्डितों ने कहा है इस भांति समस्तग्रहोंका रूप जानकर पण्डितों को वदनमें स्थापित करना चाहिये ॥ ७७ ॥

अथ ललाटे सूर्यादिवासज्ञानमाह—

भाले विशाले वसतीह भौमो दक्षाम्बके वै दिनपो विभाति।
वामे सुनेत्रे क्षणदाधिपेशः श्रोत्रे च दक्षे सुरराजवन्द्यः ॥ ७८ ॥

इस विशाल भाल में मङ्गल बसता है व दाहिने लोचन में सूर्य सोहते हैं व बायें नेत्र में चन्द्रमा विराजता है और दाहिने कान में बृहस्पति रहते हैं ॥ ७८ ॥

---

१ मयोक्तमिति वा पाठः २ दक्षिणनेत्रे ३ सूर्यः ४ चन्द्रः ५ बृहस्पतिः ॥

वामे च कर्णे रविजं[1] वदन्ति नासास्थितं वै कथयन्ति काव्यम्[2] ।
चन्द्रात्मजं वेदविदो मुखाब्जे[3] वासो हि ज्ञेयोऽखिलखेचराणाम् ॥ ७९ ॥

वेदवेत्ता पण्डितगण बायें कानमें शनैश्चर को बतलाते हैं व नाकमें टिकेहुए शुक्रको और मुखकमल में बुध को कहते हैं इसभांति समस्तग्रहों का वास जानना चाहिये ॥ ७९ ॥ (देखो चित्र नं० २)

अथ भालस्थरेखाज्ञानमाह—

भाले विशाले खलु सप्त सन्ति रेखा विशुद्धा मुनिभिः प्रदिष्टाः[4] ।
तासां स्वरूपं हृदये निधाय ब्रूयात्फलादेशमिहैव धीमान्[5] ॥ ८० ॥

विशाल भाल में मुनिप्रणीत विशुद्ध होकर सात रेखायें विद्यमान हैं उनका स्वरूप हृदय में धारकर बुद्धिमान् को फलादेश कहना चाहिये ॥ ८० ॥

केशस्य निम्ने रविजस्य[6] रेखा ज्ञेया ततो वै धिषणस्य[7] धेया ।
तन्नीचभागे खलु भौमकस्य तन्निम्नतोथो दिवसाधिपस्य[8] ॥ ८१ ॥

बालों के निचले भाग में शनैश्चर की रेखा जानना चाहिये उसके बाद बृहस्पति की रेखा धारना चाहिये उसके नीचले भाग में मङ्गल की व उसके नीचे सूर्य की रेखा जानना चाहिये ॥ ८१ ॥

ततो ह्यधःस्थां किल भार्गवीयां[9] तन्नीचदेशे विवदेद् बुधस्य ।
तन्निम्नदेशे क्षणदाधिपस्य[10] रेखां वदेयुः[11] खलु पण्डितेन्द्राः ॥ ८२ ॥

उसके निचले स्थान में शुक्र की रेखा व उसके अधःस्थल में बुध की रेखा और उसके निचले देश में प्रधान पण्डितलोग चन्द्रमा की रेखा कहते हैं ॥ ८२ ॥ (देखो चित्र नं० ३)

सूक्ष्मे विचारे दिनपस्य रेखां दक्षे च नेत्रे शशिनश्च वामे ।
भ्रूमध्यदेशे खलु भार्गवस्य ब्रूयात्सुधीरो विधुजस्य वक्त्रे ॥ ८३ ॥

सूक्ष्म विचार करने पर दाहिने नेत्रके ऊपरले भाग में सूर्य की रेखा, बायें नेत्र के ऊर्ध्वस्थल में चन्द्रमा की रेखा, भौंहों के विचले भाग में शुक्र की रेखा और वदन में या नासिका के अग्रभाग में बुधकी रेखा पण्डित को कहना चाहिये ॥ ८३ ॥ (देखो चित्र नं० ४)

---

१ शनैश्चरम् २ शुक्रम् ३ वदनसरोजे ४ व्याख्याताः ५ कथयेत् ६ शनैश्चरस्य ७ बृहस्पतेः ८ सूर्यस्य ९ शुक्रस्य १० चन्द्रस्य ११ कथयेयुः ॥

यस्यास्ति भाले धिषणस्य रेखा संभुग्नमध्या विशदा विभाति।
ज्ञानी धनी स्यान्मनुजस्तदानीं सद्वृत्तशाली सरलस्वभावः ॥ ८४ ॥

जिसके भाल में बृहस्पति की रेखा बीच में टेढ़ी होकर विशुद्ध होतीहुई सोहती हो तो वह प्राणी ज्ञानी व धनी होताहुआ महायशस्वी होकर सीधे स्वभाववाला होता है ॥ ८४ ॥ (देखो चित्र नं० ५)

वृत्तेन युक्ता सुरराजमन्त्रिरेखा विशुद्धा कुटिला विभाति।
वित्तस्य नाशं लभते मनुष्यो भ्रान्तो भवार्तो भयतामुपैति ॥ ८५ ॥

बृहस्पति की रेखा वृत्ताकार निशान से संयुक्त व विशुद्ध होकर टेढ़ी होती हुई सोहती हो तो वह प्राणी भ्रान्त होकर सांसारिक दुःखों से पीड़ित होता हुआ भयसमूह को पाता है ॥ ८५ ॥ (देखो चित्र नं० ६)

मन्दस्य रेखा कुटिला विभाति भौमस्य रेखा धनुषाकृतिश्चेत्।
दुष्टामवस्थामवलम्ब्य जन्तुर्जायाविहीनो जडतामुपैति ॥ ८६ ॥

शनैश्चर की रेखा टेढ़ी होकर सोहती हो और मङ्गलकी रेखा धन्वाकार होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी बुरी दशाका अवलम्बनकर जायारहित होता हुआ जड़ता को पाता है ॥ ८६ ॥ (देखो चित्र नं० ७)

भाले विशाले सरला हि तिस्रो रेखा विशुद्धा नितरां विभान्ति।
सौभाग्यशाली सरलस्वभावो नीतौ रतः स्यात्सकलप्रियश्च ॥ ८७ ॥
प्रवञ्चनाशून्यवपुर्विलासी प्रशंसनीयो महतामुपासी।
सतां चरित्रेण युतो मनस्वी सुती सुविद्यः सुखतामुपैति ॥ ८८ ॥

जिसके विशालभाल में तीन रेखायें विशद होकर अतीव चमकती हों तो वह प्राणी सीधेस्वभाववाला व सबों का प्यारा होकर नीति में परायण होता हुआ सौभाग्यशाली होता है व प्रतारणा से रहित तनुवाला, विलासी, प्रशंसनीय, महात्माओं का उपासक, सच्चरित्र से संयुक्त, मनमौजी होताहुआ पुत्रवान् व विद्यावान् होकर सुखसमूह को पाता है ॥ ८७ । ८८ ॥ (देखो चित्र नं० ८)

मध्ये विभिन्ना यदि मन्दरेखा स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य।
भिन्ना यदानीमवनीसुतस्य सूर्याब्जयोश्चेत्खलु स्वल्परूपा ॥ ८९ ॥
सोयं नरः स्याद् बहुकार्यकारी संमानितो मानसशक्तिधारी।
सौभाग्यहीनो हि यदा कदापि चिन्तान्वितो वै चपलस्वभावः ॥ ९० ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बीच में छिन्नभिन्न हो व बृहस्पति की रेखा छोटीसी हो व मङ्गल की रेखा भिन्न हो और सूर्य तथा चन्द्रमा की रेखा स्वल्परूपवाली होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी घने कामों का करनेवाला व भलीभांति मानित होकर मानसगुणशाली व जबकब सौभाग्यहीन व चपलस्वभाववाला होता हुआ चिन्ता से युक्त रहता है ॥ ८९।९० ॥ (देखो चित्र नं० ९)

मन्दाररेखा सरलस्वरूपा तन्मध्यगा चेत्कुटिला गुरोश्च ।
सौभाग्यशाली मनुजस्तदानीं मानी महौजा धनतामुपैति ॥ ९१ ॥

यदि शनैश्चर व मङ्गल की रेखा सीधी होकर प्रतीत हो और उन दोनों के बीच में गई हुई बृहस्पति की रेखा टेढ़ी होकर भासती हो तो वह प्राणी सौभाग्यशाली होता हुआ मानी व महाबली होकर धनसमूह को पाता है ॥९१॥ (देखो चित्र नं० १०)

सौरी सुरेखा विशदा विभाति सर्पानुरूपा सुरवन्दितस्य ।
सोयं नरः स्याद्व्यवसायशाली वित्ताभिलाषी जनवञ्चकश्च ॥ ९२ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा साफ़ सीधी हो व बृहस्पति की रेखा सर्पाकार होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी रोज़गारी होकर धनाभिलाषी होता हुआ जनवञ्चक होताहै॥९२॥ (देखो चित्र नं० ११)

भान्तीह भाले मनुजस्य यस्य छिन्ना विभिन्ना बहुशो हि रेखाः ।
पीडाकराघातमुपैति देहे दौर्भाग्यशाली दयिताविहीनः ॥ ९३ ॥

जिस प्राणी के भाल में बहुतसी रेखायें छिन्नभिन्न होकर सोहती हों तो वह दौर्भाग्यशाली होकर प्यारी से विहीन होता हुआ देह में कष्टकारक आघातों को पाता है ॥९३॥ (देखो चित्र नं० १२)

नीचोर्ध्वभिन्ना वृजिना हि सौरी द्विच्छिन्नकण्ठा धिषणाधिपा स्यात् ।
कौजी कुरेखा यदि भाति भाले प्राप्त्वा त्वनिष्टं धननाशमेति ॥ ९४ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा निचले तथा ऊपरले भाग में भग्न होकर टेढ़ी सोहती हो व बृहस्पतिकी रेखा टेढ़ी व तीन खण्डवाली होकर प्रतीत होती हो तथा मङ्गल की रेखा छोटी होकर जिसके ललाट में सोहती हो तो वह प्राणी अनिष्ट को पाकर धनक्षय को पाता है ॥ ९४ ॥ (देखो चित्र नं० १३)

द्विच्छिन्नमध्या सरलार्कसूनोर्मध्ये विभिन्ना गुरुभौमयोश्च ।
सम्पत्तिनाशं लभते मनुष्यस्तथाधिकारीकृतवस्तुहानिम् ॥ ९५ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा सीधी होकर विचलेभाग में छोटीसी दो रेखाओं से कटी हुई प्रतीत होवे और बृहस्पति तथा मङ्गल की रेखा मध्यभाग में भग्न देखपड़ती हो तो वह प्राणी सम्पत्तिनाश व अधिकृतवस्तु की हानिको पाताहै॥९५॥ (देखो चित्र नं० १४)

मन्दस्य रेखा धनुषाकृतिश्चेद्गीर्वाणवन्द्यस्य तथा विभाति।
भौमी गभीरा विनता यदानीं दौर्जन्ययुक्तो मनुजोऽधमः स्यात्॥ ९६॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत हो और मङ्गल की रेखा गहरी होती हुई लचीसी भासती हो तो वह प्राणी अधम होकर दुर्जनता में परायण रहता है॥ ९६॥ (देखो चित्र नं० १५)

रेखा गभीरा विशदा हि सौरी विभाति वक्रा बृहतां पतेश्च।
दुष्टामवस्थामवलम्ब्य जन्तुर्जायाभिभूतो भयतामुपैति॥ ९७॥

यदि शनैश्चर की रेखा विशद होकर गहरी प्रतीत हो और बृहस्पति की रेखा वक्राकार होकर सोहती हो तो वह प्राणी दुष्ट अवस्था का अवलम्बनकर निज नारी से अनादृत होता हुआ भयसमूह को पाता है॥ ९७॥ (देखो चित्र नं० १६)

भाले विशाले मनुजस्य यस्य मध्ये विभग्ना यदि भाति मान्दी।
नीचोर्ध्वभग्ना वृजिना गुरोश्च सार्प्या सुभग्ना कुटिला हि कौजी॥९८॥
सोयं मनुष्यो नरघातकारी वेश्याविहारी वनितापहारी।
दुरोदराक्रान्तमना मनस्वी प्राप्नोति मृत्युं स्वयमेव भीत्या॥ ९९॥

जिसके विशाल भाल में यदि शनैश्चर की रेखा बीचमें कटीहुई सोहती हो व निचले तथा ऊपरले भाग में बृहस्पति की रेखा भग्न होकर टेढ़ी प्रतीत हो और मङ्गल की रेखा सर्पसमान व भग्न होती हुई टेढ़ी होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी नरहत्याकारी, वेश्याविहारी, वनितापहारी होकर जुआड़ी व मनमौजी होताहुआ डरसे आपही मौत को पाता है॥ ९८। ९९॥ (देखो चित्र नं० १७)

यस्यास्ति भाले विशदा गभीरा रेखा यदैका धनुषाकृतिश्चेत्।
सोयं जघन्यो मनुजो जनानां नीचस्वभावो भ्रमतेऽप्यजस्रम्॥ १००॥

जिसके भाल में उज्ज्वल व गहरी होतीहुई एकही रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी मनुजों में अधम होताहुआ नीच स्वभाववाला होकर हमेशा ही घूमता रहता है॥ १००॥ (देखो चित्र नं० १८)

संमध्यभग्ना रविजस्य रेखा वामात्रिशाखा धिषणस्य भाति।
सोयं मनुष्यश्चपलस्वभावश्चञ्चत्प्रभावोऽनृतभावमेति॥ १॥

यदि शनैश्चर की रेखा बीचमें भग्न होकर प्रतीयमान होती हो और यदि बृहस्पति की रेखा वामभाग में तीन शाखाओंवाली होकर सोहती हो तो वह प्राणी चपलस्वभाववाला व प्रदीप्त प्रभाववाला होकर असत्यता को पाता है यानी झूठा होता है ॥ १ ॥ (देखो चित्र नं० १९)

रेखाश्चतस्रो यदि भान्ति भाले संमध्यभग्ना प्रथमा चतुर्थी ।
सोयं नरः स्यात्सरलस्वभावः सतां चरित्रेण युतो मनीषी ॥ २ ॥

यदि भाल में चार रेखायें सोहती हों उन्होंमें से पहली व चौथी बिचले भाग में कटीहुई प्रतीत हो तो वह प्राणी सीधे स्वभाववाला व बुद्धिमान् होकर सज्जनों के चरित्रों से युक्त रहता है ॥ २ ॥ (देखो चित्र नं० २०)

सर्पाननाभा यदि भाति मान्दी कुजेज्ययोश्चेत्कुटिला विभाति ।
उच्चस्थलाद्धे पतितो मनुष्यो देहाभिघातं लभते नितान्तम् ॥ ३ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा सर्पफणाकार होकर सोहती हो और मङ्गल व बृहस्पति की रेखा टेढ़ीसी भासती हो तो वह प्राणी ऊंचे स्थान से गिरता हुआ देहमें अत्यन्त चोट चपेट को पाता है ॥ ३ ॥ (देखो चित्र नं० २१)

मान्दी विभुग्ना यदि मध्यभग्ना नीचे विभग्नाधिषणस्य चाल्पा ।
भिन्ना यदोर्ध्वे सरला हि भौमी संमध्यभग्ना कुटिला रवेश्च ॥ ४ ॥
दैत्यार्चिताल्पा क्षणदाधिपस्य द्वाभ्यां विभिन्ना यदि भाति भाले ।
सौभाग्यहीनो हि यदा कदापि पुनर्दरिद्री पुनरेव भोगी ॥ ५ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा टेढ़ी होकर बिचले भाग में भग्न हो व बृहस्पति की रेखा निचले भाग में भग्न होकर छोटीसी हो व मङ्गल की रेखा ऊपरले भाग में भिन्न होकर सीधी हो व सूर्य की रेखा बीचमें कटीहुई टेढ़ी सोहती हो व शुक्र की रेखा छोटीसी और चन्द्रमा की रेखा दो रेखाओं से कटी हुई प्रतीत होवे तो वह प्राणी जब कब सौभाग्यहीन होताहुआ फिर दरिद्री व फिर भोगी होता है ॥ ४ । ५ ॥ (देखो चित्र नं० २२)

अर्धेन्दुसाम्याः खलु केशनिम्ने क्षुद्रस्वरूपा यदि सप्त सन्ति ।
भाले विशाले गुरुभौमयोश्च सौर्प्ये द्विरेखे विशदे विभातः ॥ ६ ॥

विशाल भाल में बालों के नीचे अर्धचन्द्रसमान छोटीसी सात रेखायें प्रतीत हों और बृहस्पति व मङ्गल इन दोनों की रेखायें विशद होकर सर्पाकार सोहती हों ॥ ६ ॥

सोयं नरो मज्जति वारिवाहे कीलालगर्ते पतितोऽथवा स्यात् ।

---

१ शुक्रस्य २ चन्द्रस्य ३ अर्धचन्द्रसमानाकाराः ४ सर्पाकारे ॥

भ्रान्तो भवार्तो भयतासमेतश्चिन्तान्वितो वै चपलस्वभावः ॥ ७ ॥

तो वह प्राणी जल में डूबता है अथवा पानी के कुण्ड में गिरता हुआ भ्रान्त, दुःखार्त, भयसमूहसे युक्त व चिन्तासमेत होकर चपलस्वभाववाला होता है ॥ ७ ॥ (देखो चित्र नं० २३)

मन्दाररेखा यदि मध्यभग्ना तदन्तरे चेद्धिनतागुरोश्च ।
सौभाग्यशाली मनुजस्तदानीं व्युत्पन्नबुद्धिर्धनतामुपैति ॥ ८ ॥

यदि शनैश्चर व मङ्गल इन दोनों की रेखायें बीच में भग्न हुई प्रतीयमान होती हों और उन दोनों के बीच में बृहस्पति की रेखा लचीहुई सोहती हो तो वह प्राणी सौभाग्यशाली होताहुआ व्युत्पन्नबुद्धि होकर धनसमूहों को पाता है ॥ ८ ॥ (देखो चित्र नं० २४)

लग्ने मिथश्चेद्यदि मध्यभग्ने मन्देज्यरेखे कुटिले विभातः ।
पाशेन मृत्युं लभते मनुष्यो हत्याप्रकाण्डैः सहितो नराणाम् ॥ ९ ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की दोनों रेखायें परस्पर लगी या सटीहुई बीच में भग्न होकर टेढ़ी सोहती हों तो वह प्राणी हत्यासमूहों से संयुक्त होताहुआ फांसी से मौत को पाता है ॥ ९ ॥ (देखो चित्र नं० २५)

मान्दी गभीरा विनता विभाति स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य ।
भौमी विभुग्ना जटुलेन युक्ता हत्याकरो वै पुरुषः कठोरः ॥ १० ॥

यदि शनैश्चर की रेखा गहरी होकर लचीसी सोहती हो, बृहस्पति की रेखा छोटीसी हो और मङ्गल की रेखा टेढ़ी होकर मसा से संयुक्त प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी कठोर होकर हत्याकारी होता है ॥ १० ॥ (देखो चित्र नं० २६)

सौरी सुरेखा सरला विभाति सुरेन्द्रवन्द्यस्य च नीचभुग्ना ।
स्वल्पस्वरूपा धरणीसुतस्य सौभाग्यशाली धनतासमेतः ॥ ११ ॥

यदि शनैश्चरकी रेखा सीधीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा निचले भाग में टेढ़ी हो और मङ्गल की रेखा छोटीसी प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी धनवान् होकर सौभाग्यशाली होता है ॥ ११ ॥ (देखो चित्र नं० २७)

सर्पाननाभा यदि भाति भाले भ्रूमध्यदेशे सरला विभान्ति ।
सोयं मनुष्यो बहुभाषणाढ्यो वामाप्रसक्तो बलतासमेतः ॥ १२ ॥

यदि भालमें सर्पसमान होकर एकही रेखा सोहती हो और भौंहों के बिचले भाग में

सीधी बहुतसी रेखायें भासती हों तो वह प्राणी बड़ा वक्ता होकर रमणियों में रत होता हुआ बलसमूहों से संपन्न होता है ॥ १२ ॥ (देखो चित्र नं० २८)

भाले विशाले मनुजस्य रेखाश्छिन्ना विभिन्ना बहुशो विभान्ति ।
सोयं महेच्छो बहुकार्यकारी सामान्यमात्रोऽखिलमानवानाम् ॥ १३ ॥

जिसके विशाल भाल में बहुतसी रेखायें छिन्न भिन्न होकर प्रतीत होवें तो वह प्राणी बड़ी चाहनावाला व घने कार्यों का करनेहारा होकर समस्त मनुष्यों में सामान्यमात्र होता है ॥ १३ ॥ (देखो चित्र नं० २९)

नीचोर्ध्वभग्ने कुजमन्दरेखे दक्षे च वामे भुजगानने स्तः ।
तदन्तरं चेत्पविलाञ्छनाढ्यं पाशेन मर्त्यो मृतिमेति नूनम् ॥ १४ ॥

मङ्गल और शनैश्चर की रेखायें निचले तथा ऊपरले भागमें सर्पानन के समान होकर भासती हों और उन दोनों के मध्य में वज्राकारसा निशान प्रतीयमान होता हो तो वह प्राणी निश्चयकर फांसी से मौतको पाता है ॥ १४ ॥ (देखो चित्र नं० ३०)

सौरी सुरेखा विनता यदानीं भुग्नस्वरूपा धिषणस्य भाति ।
संमध्यभग्ना धरणीसुतस्य दीर्घा गभीरा कुटिला रवेश्च ॥ १५ ॥
महाधनाढ्यो मनुजो मनीषी सौभाग्यशाली सुखदो जनानाम् ।
दाता दयालुर्दयितानुरक्तो धन्यो धरायां धरया समेतः ॥ १६ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बड़ीभारीं होकर लचीसी प्रतीत हो व बृहस्पति की टेढ़ी होकर सोहती हो व मङ्गल की रेखा बीचमें भग्न होकर भासती हो और सूर्यकी रेखा दीर्घाकार व गहरी होकर टेढ़ीसी दीखती हो तो वह प्राणी महाधनवान्, बुद्धिमान्, सौभाग्यशाली, जनसुखदायक, दाता, दयालु व दयिता में अनुरक्त होकर धरासमेत धरामण्डल में प्रशंसनीय होता है ॥ १५ । १६ ॥ (देखो चित्र नं० ३१)

मन्देज्यरेखे यदि मध्यभग्ने कौजी सुरेखा सरला विभाति ।
स्वल्पस्वरूपा दिनपस्य भाति वामे विभुग्ना किल भार्गवीया ॥ १७ ॥
व्युत्पन्नबुद्धिर्मनुजो हि शास्त्री सौभाग्ययुक्तो धनतासमेतः ।
प्रवञ्चनाशून्यवपुर्विलासी सद्वृत्तशाली चतुरोतिकोपी ॥ १८ ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की रेखा बीच में भग्न होकर भासती हो व मङ्गल की रेखा दीर्घाकार होकर सीधी सोहती हो व सूर्यकी छोटीसी व शुक्रकी रेखा बायें तरफ़

टेढ़ीसी देख पड़ती हो तो वह प्राणी शास्त्री, व्युत्पन्नबुद्धि, सौभाग्यवान्, धनवान्, छलरहि व अच्छे चरित्रोंवाला व चतुर होकर महाकोपी होता है ॥ १७ । १८ ॥ (देखो चित्र नं० ३२)

स्वल्पा विभुग्ना रविजस्य रेखा सर्पाननाढ्या धिषणस्य भग्ना ।
शाखासमेता विनता हि भौमी मूढो मनुष्यो नरघातकारी ॥ १९ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा छोटीसी होकर टेढ़ी व बृहस्पति की रेखा बीचमें भग्न होकर सर्पानन से संयुक्त हो और मङ्गलकी रेखा शाखा समेत होकर लचीसी भासती हो तो वह प्राणी महामूर्ख होकर नरहत्याकारी होता है ॥ १९ ॥ (देखो चित्र नं० ३३)

मान्दी गभीरा विनता विभाति स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य ।
पृथ्वीतनूजस्य तनुस्वरूपा दीर्घाद्विभिन्ना द्युमणेर्नता चेत् ॥ २० ॥
सोयं जनः स्यात्कलहानुरक्तो महाप्रकोपी मदनातुरात्मा ।
खड्गप्रहारेण हतस्समीके शस्त्रप्रहारैरुत खण्डितश्च ॥ २१ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा गहरी होकर लचीसी सोहती हो, बृहस्पति की रेखा छोटीसी हो, मङ्गलकी रेखा गहरी होकर सूक्ष्मरूप से प्रतीयमान होती हो और सूर्य की रेखा गहरी व दो रेखाओं से कटी हुई लचीसी भासती हो तो वह प्राणी कलही, कोपी व कामी होकर समर में तलवार से माराजाता है या शस्त्रों के प्रहारों से काटाजाता है ॥ २० । २१ ॥ (देखो चित्र नं० ३४)

मान्दी विभुग्ना यदि नीचभग्ना बृहस्पतेश्चेद्विनता विभाति ।
भौमी सुदीर्घा वृजिना यदानीं संमध्यभग्ना कुटिला रवेश्च ॥ २२ ॥
सोयं नरः स्यात्कलहानुरक्तो रूक्षस्वभावः शठतासमेतः ।
उपद्रवाक्रान्तमना मनस्वी मन्दो मलाढ्यो जनवञ्चकश्च ॥ २३ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा टेढ़ी होकर निचले भाग में भग्न होती हुई सोहती हो व बृहस्पति की रेखा लचीसी भासती हो व मङ्गल की रेखा दीर्घाकार होकर टेढ़ी हो और सूर्य की विचले भाग में भिन्न होकर वक्राकारसी सोहती हो तो वह प्राणी कलही, कठोर स्वभाववाला, शठतासंपन्न, उपद्रवी, मनमौजी, मूर्ख व मैला होकर जनों का छलनेवाला होता है ॥ २२ । २३ ॥ (देखो चित्र नं० ३५)

मान्दी विभुग्ना परितो विभग्ना दीर्घा विभिन्ना सरला गुरोश्च ।
मध्ये च भग्ना कुटिला कुजस्य चापानुरूपा द्युमणेर्यदानीम् ॥ २४ ॥

१"मन्दो मूर्खे शनैश्चरे" (इति विश्वः) ॥

यदि शनैश्चर की रेखा चारों तरफ़ भग्न होकर टेढ़ीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा दीर्घाकार होकर सीधी सोहती हो व मङ्गल की रेखा विचले भाग में कटी फटी हुई टेढ़ीसी प्रतीत होवे और सूर्य की रेखा धन्वाकार होकर भासती हो ॥ २४ ॥

संमध्यभग्ना किल भार्गवीया रामारतो वै रसिको मनुष्यः ।
सत्यप्रवक्ता सरलस्वभावो नम्रो हि वेत्ता विनयी जयी च ॥ २५ ॥

यदि शुक्र की रेखा विचले भाग में कटी हुई भासती हो तो वह प्राणी रमणीरत, रसज्ञाता, सत्यवक्ता होकर सीधे स्वभाववाला नम्र, वेत्ता और विनयी होता हुआ जीतनेवाला होता है ॥ २५ ॥ (देखो चित्र नं० ३६)

दक्षे विभग्ना वृजिना हि मान्दी दीर्घा गभीरा विनता गुरोश्च ।
स्वल्पा विभुग्ना धरणीसुतस्य व्याजेन व्याप्तः सरलस्वभावः ॥ २६ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा दाहिने भाग में भग्न होकर टेढ़ी सोहती हो व बृहस्पति की रेखा गहरी होकर लचीसी भासती हो और मङ्गलकी रेखा छोटीसी होकर टेढ़ी देख पड़ती हो तो वह प्राणी कपटसे घिरा हुआ सीधे स्वभाववाला होता है ॥ २६ ॥ (देखो चित्र नं० ३७)

मध्ये विभिन्ना कुटिला हि मान्दी दक्षे च भग्ना बृहतां पतेश्च ।
वक्रार्कयोश्चेत्खलु दक्षसार्प्या व्युत्पन्नबुद्धिर्धननाशमेति ॥ २७ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बीच में भिन्न होकर टेढ़ी सोहती हो व बृहस्पति की रेखा विचले भाग में कटी व टेढ़ी होकर दाहिने भाग में भग्न होती हुई भासती हो एवं मङ्गल व सूर्य की रेखा दाहिनी तरफ़ सर्पाकार प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी व्युत्पन्नबुद्धि वाला होकर धनक्षय को पाता है ॥ २७ ॥ (देखो चित्र नं० ३८)

सौरी सुदीर्घा विनता गभीरा दक्षे च भागे जंटुलेन युक्ता ।
ऊर्ध्वे विभिन्ना कुटिला गुरोश्च सर्पानुरूपा यदि भाति भौमी ॥ २८ ॥
संभ्रान्तचित्तो मनुजोऽतिखिन्नो वेत्ता विशुद्धो विगताभिमानः ।
उच्चस्थलाद्वै पतितो भयार्तः सांघातिकार्तिं लभते नितान्तम् ॥ २९ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा दीर्घाकार, लची व गहरी होकर दाहिने भाग में मसा से संयुक्त होकर भासती हो व बृहस्पतिकी रेखा ऊपरले भाग में भिन्न होकर टेढ़ी सोहती हो और यदि मङ्गल की रेखा सर्पसमान रूपवाली होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी संभ्रान्त

---

१ मशकेन युक्तः २ बृहस्पतेः ३ भौमस्य ४ ज्ञाता ॥

मनवाला, महाखिन्न, ज्ञाता, पवित्रात्मा, अभिमानरहित होकर ऊंचे स्थल से गिरा व भय से घबड़ाता हुआ गाढ़ी सांघातिक पीड़ा को पाता है ॥ २८।२९ ॥ (देखो चित्र नं० ३९)

अर्धेन्दुयुक्ते खलु चोर्ध्वभागे मन्देज्यरेखे सरले विभातः ।
सूर्येन्दुयोगो यदि भाति भाले सौभाग्यशाली पुरुषो नितान्तम् ॥ ३० ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की रेखा ऊपरले भाग में अर्धचन्द्राकार निशान से संयुक्त होकर सीधी सोहती हो और यदि भाल में सूर्य व चन्द्रमा की रेखा का योग भासता हो तो वह प्राणी बड़ा सौभाग्यशाली होता है ॥ ३० ॥ (देखो चित्र नं० ४०)

ऊर्ध्वे विभिन्ना विनता हि मान्दी दीर्घा विनम्रा धिषणस्य रेखा ।
संमध्यभिन्ना कुटिला हि कौजी भ्रूमध्यदेशे लसितं त्रिशूलम् ॥ ३१ ॥
देहाभिघातं लभते मनुष्यः पातस्य हेतोरतिहानिमेति ।
प्रेमास्पदो वै वनिताविलासी प्रसन्नमूर्तिर्जनरञ्जकश्च ॥ ३२ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा ऊपरले भाग में कटकर लचीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा दीर्घाकार होकर लचीसी देख पड़ती हो व मङ्गल की रेखा बीच में कटी हुई टेढ़ी सी प्रतीत हो और यदि भौंहों के बीच में त्रिशूलाकार निशान सोहता हो तो वह प्राणी देह में आघात को पाता है व गिरने के कारण बड़ी हानि को पहुँचता है व प्रेम का घर होकर वनिताओं में विलास करता हुआ प्रसन्नमूर्ति होकर जनों का मनोरञ्जक होता है ॥ ३१ । ३२ ॥ (देखो चित्र नं० ४१)

सर्पायमाना[1] यदि भाति सौरी[2] स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य[3] ।
दक्षत्रिशाखा धरणीसुतस्य वामैकशाखा विशदा यदानीम् ॥ ३३ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा सर्पाकार के समान होकर भासती हो व बृहस्पति की रेखा छोटीसी प्रतीत हो और मङ्गलकी रेखा दाहिनी तरफ़ तीन शाखावाली व बायें भाग में एक शाखावाली होकर साफ़ सोहती हो ॥ ३३ ॥

ऐश्वर्यहीनो मनुजोऽतिलोलो[4] विश्वासघाती बलदर्पितश्च ।
प्रवञ्चकोऽयं जगतो जनानां धूर्तस्वभावो ह्यतिगौरवाढ्यः ॥ ३४ ॥

तो वह प्राणी ऐश्वर्यहीन, अतिचञ्चल, विश्वासघातक व बलगर्वित होताहुआ संसारी जनों का छलनेवाला व धूर्त स्वभाववाला होकर अति गौरवता से संपन्न होता है ॥ ३४ ॥ (देखो चित्र नं० ४२)

---

१ सर्पसमाना २ शनैश्चरस्य रेखा ३ बृहस्पतेः ४ महाचञ्चलः ॥

धन्वाकृतिश्चेद्रविनन्दनस्य सर्पानुरूपा सुरवन्दितस्य ।
वामे विभग्ना महिजस्य भुग्ना स्यान्मानवो वै नरघातकारी ॥ ३५ ॥

यदि शनैश्चरकी रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत होवे व बृहस्पतिकी रेखा सर्पाकार होकर भासती हो और यदि मङ्गलकी रेखा टेढ़ी होकर वामभाग में कटीफटीसी सोहती हो तो वह प्राणी नरघातक होता है ॥ ३५ ॥ (देखो चित्र नं० ४३)

सर्पाननाभां विशदस्वरूपां गुरोश्च स्वल्पा समुपैति सौरीम् ।
वक्रा यदानीं शशिजस्य रेखा हिंस्रो विवादी कलही नरः स्यात् ॥३६॥

यदि छोटीसी बृहस्पति की रेखा सर्पसमान मुखवाली विशदस्वरूप शनैश्चर की रेखा के पास पहुँच गई हो और यदि बुध की रेखा वक्राकार होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी हिंसाशाली व विवादी होता हुआ लड़ाका होता है ॥ ३६ ॥ (देखो चित्र नं० ४४)

मन्दस्वरूपा यदि भाति मान्दी दक्षे विभिन्ना धिषणस्य दीर्घा ।
कण्ठे विभग्ना कुटिला हि कौजी नीचे गभीरा श्रुतिमेति वामाम् ॥३७॥

यदि शनैश्चरकी रेखा मन्दस्वरूपवाली होकर प्रतीत होवे तथा बृहस्पति की रेखा दाहिने भागमें विभिन्न होकर दीर्घाकार सोहती हो और यदि मङ्गल की रेखा कण्ठ-भाग में विभिन्न होतीहुई टेढ़ी व निचले भाग में गहरी होकर बायें कान के पास पहुँच गई हो ॥ ३७ ॥

सोयं मनुष्यो नरघातकारी ह्यनिष्टकारी प्रमदाविहारी ।
द्यूताभिलाषी भ्रमते नितान्तं क्रोधाभिभूतो मदनाकुलश्च ॥ ३८ ॥

तो वह प्राणी नरघातक, अनिष्टकारक, प्रमदाविहारी व जुआड़ी होकर क्रोध से झुंझलाता व काम से घबड़ाता हुआ हमेशा घूमा करता है ॥ ३८ ॥ (देखो चित्र नं० ४५)

स्वल्पस्वरूपा यदि भाति सौरी संमध्यभिन्ना विशदा गुरोश्च ।
दीर्घा विनम्रा कुटिला हि कौजी छिन्ना विभिन्ना किल भार्गवीया॥३९॥

यदि शनैश्चर की रेखा छोटीसी होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा विचले भाग में कटती हुई साफ़ भासती हो और यदि मङ्गल की रेखा दीर्घ, लची व टेढ़ी होकर प्रतीत होती हो तथा शुक्र की रेखा दाहिने भाग में कटी व बिचले भाग में भग्न होकर सोहती हो ॥ ३९ ॥

सोयं नरः स्यात्सरलस्वभावो दानी च मानी च महाभिमानी ।
क्रोधी परस्त्रीं भजतेऽप्यजस्रं मित्राभिभूतो मदनातुरश्च ॥ ४० ॥

---

१ स्वल्पस्वरूपा २ बृहस्पतेः ३ मङ्गलस्येयम् ४ कर्णम् ५ रमणीरतः ६ शनैश्चरस्य ७ बृहस्पतेः ८ मङ्गलस्य ९ शुक्रस्य रेखेति यावत् ॥

तो वह प्राणी सीधे स्वभाववाला, दाता, मानी व महाभिमानी होता हुआ क्रोधी, मित्रों से तिरस्कृत व कामातुर होकर परस्त्री का सेवन करता है ॥ ४० ॥ (देखो चित्र नं० ४६)

मान्दी गभीरा यदि भाति स्वल्पा वेत्रस्वरूपा बृहतांपतेश्च ।
भ्रूमध्यदेशो बहुकेशयुक्तः संपत्तिशाली धनिकः सुभार्यः ॥ ४१ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा गहरी व छोटी होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा वेत्र-रूपा होकर भासती हो और यदि भौंहों का मध्यदेश बहुत बालों से युक्त होताहुआ प्रतीयमान होता हो तो वह प्राणी संपत्तिशाली व धनवान् होकर अनेक भार्याओंवाला होता है ॥ ४१ ॥ (देखो चित्र नं० ४७)

सौरस्य रेखा यदि भाति चाल्पा भुग्ना गुरोर्वै निकटार्धवृत्ता ।
दक्षभ्रकुट्यां लसितैकरेखा भ्रूमध्यदेशो बहुकेशयुक्तः ॥ ४२ ॥

यदि शनैश्चरकी रेखा छोटीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा टेढ़ी होकर निकटवर्ती अर्ध-वृत्ताकार से युक्त हो व दाहिनी भृकुटी पर छोटीसी एक रेखा शृङ्गाकार प्रतीत हो और यदि भौंहों का बिचला भाग घनेबालों से संयुक्त होकर सोहता हो ॥ ४२ ॥

मस्ताभिघातं लभते मनुष्यो विदंशितः स्यात्खलु कुक्कुराद्यैः ।
विषप्रयोगैरतिशङ्कितश्च क्रोधाभिभूतो भयतामुपैति ॥ ४३ ॥

तो वह प्राणी मस्तक में चोट चपेट को पाता है व कूकुर आदि दुष्टजीवों से डसा व विषप्रयोगों से अत्यन्त डरा व क्रोधसे घबड़ाता हुआ भयसमूहों को पाता है ॥ ४३ ॥ (देखो चित्र नं० ४८)

भुग्ना गभीरा यदि भाति मान्दी दीर्घा विनम्रा विशदा गुरोश्च ।
सर्पाननाभा विनता हि कौजी संमध्यभिन्ना द्युमणेर्यदानीम् ॥ ४४ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा टेढ़ी व गहरी होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा दीर्घा-कार होकर लची व विशद होती हुई प्रतीत हो तथा मङ्गल की रेखा सर्पानन के समान होकर लचीसी भासती हो और यदि बीच में भग्न हुई सूर्य की रेखा सोहती हो ॥ ४४ ॥

सौभाग्यशाली सुषमासमेतः सौन्दर्ययुक्तो नितरामुदारः ।
सुखी सुविद्यो महतामुपासी मान्यो जनानां सुखदोऽनुजानाम् ॥ ४५ ॥

तो वह प्राणी सौभाग्यशाली व शोभासमेत व सुन्दरता से युक्त बड़ा उदार, सुखी अच्छी विद्यावाला होकर महात्माओं का उपासी व जनों का माननीय होता हुआ भाइयों को सुखदायक होता है ॥ ४५ ॥ (देखो चित्र नं० ४९)

स्वल्पा गभीरा विनता हि सौरी संमध्यभिन्ना वृजिना गुरोश्च ।
दीर्घा विशुद्धा विनता हि कौजी त्यागी धनी साहसिको नरःस्यात् ॥४६॥

यदि शनैश्चर की रेखा छोटी व गहरी होकर लचीहुई भासती हो व बृहस्पति की रेखा बीच में भग्न होती हुई टेढ़ी सोहती हो और मङ्गलकी रेखा दीर्घाकृति व विशद होकर लचीसी प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी त्यागी व धनवान् होकर साहसिक होता है ॥ ४६ ॥ (देखो चित्र नं० ५०)

नीचोर्ध्वभिन्ना यदि भाति मान्दी संकर्तितात्पा सुरपूजितस्य ।
छिन्ना विभिन्ना वृजिना बुधस्य भ्रूमध्यदेशो विशदो द्विशूलः ॥ ४७ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा निचले तथा ऊपरले भाग में भिन्न होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा कटती हुई छोटीसी प्रतीत हो और यदि बुध की रेखा छिन्न व भिन्न होकर टेढ़ी भासती हो तथा भौंहोंका बिचला भाग विशुद्ध होकर दो रेखाओंवाला भासता हो ॥ ४७ ॥

सोयं मनुष्यश्चतुरोऽतिविज्ञो मिष्टप्रभाषी परिणामदर्शी ।
क्लान्त्याविहीनोऽखिलकार्यदक्षो व्युत्पन्नबुद्धिःखलु साहसी स्यात् ॥४८॥

तो वह प्राणी चतुर, अतिविज्ञ, मधुरभाषी, परिणामदर्शी, ग्लानिहीन व समस्त कार्योंमें प्रवीण होकर व्युत्पन्नबुद्धि होता हुआ साहसी होता है ॥ ४८ ॥ (देखो चित्र नं० ५१)

चापानुरूपा रविजस्य रेखा सर्पायमाना सुरवन्दितस्य ।
भौमी सुदीर्घा खलु वामभुग्ना चाण्डी सशाखा यदि सव्यभुग्ना ॥४९॥

यदि शनैश्चर की रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत होवे व बृहस्पति की रेखा सर्पसमान होकर भासती हो व मङ्गल की रेखा दीर्घाकार होकर वामभाग में टेढ़ी हो और यदि सूर्य की रेखा शाखा समेत बायें तरफ कुटिलरूप से भासती हो ॥ ४९ ॥

संमध्यभिन्ना किल भार्गवीया शान्त्या विहीनो मनुजोतिलुब्धः ।
नाप्नोति सिद्धिं सकले सुकार्ये परिश्रमं वै कुरुते नितान्तम् ॥ ५० ॥

और यदि शुक्र की रेखा बिचले भाग में कटी हुई प्रतीयमान हो तो वह प्राणी शान्तिहीन, अतिलोभी होकर समस्त कार्यों में सिद्धि को नहीं पाता व बड़ा परिश्रम करता है यानी दिन रात उद्योग में ही लगा रहाता है ॥ ५० ॥ (देखो चित्र नं० ५२)

नीचे विभग्ना सरला हि सौरी[2] वामप्रचापा धिषणस्य[3] भग्ना।
कौजी[4] सशाखा यदि नीचभिन्ना सौर्य्या[5] विभिन्ना दिनपस्य[6] भाति ॥५१॥

यदि शनैश्चर की रेखा निचलेभाग में भग्न होती हुई सीधी होकर प्रतीत हो व बृहस्पति की रेखा कि जिसके वामभाग में धन्वाकार चिह्न भासता हो व निचले विचले तथा ऊपरले भाग में भग्न होकर प्रतीत हो व मङ्गल की रेखा शाखासमेत निचले भाग में भिन्न हो और यदि सूर्य की रेखा सर्पसमान होकर भिन्न होती हुई भासती हो ॥ ५१ ॥

ऊर्ध्वेगभीरा यदि मध्यभग्ना काव्यस्य[7] रेखा नितरां विभाति।
सोयं नरःस्यात्सकलप्रधानः सच्छीलयुक्तो गुणभूषितश्च ॥ ५२ ॥

यदि शुक्र की रेखा ऊपरले भाग में गहरी होकर विचले भाग में कटती हुई अत्यन्त सोहती हो तो वह प्राणी समस्त मनुष्यों में मुखिया होकर भले स्वभाव से संयुत होता हुआ गुणों से भूषित होता है ॥ ५२ ॥

विद्वान्विदेशी खलु धार्मिकश्च दाता धनी स्यादुपदेशकर्ता।
मान्यो वदान्यो ममताविहीनो विध्वस्तबाधोभ्रमतेऽप्यजस्रम् ॥ ५३ ॥

विद्वान्, विदेशवासी, धार्मिक, दाता, धनवान्, उपदेशक, माननीय व बड़ा वक्ता होकर ममता से रहित व बाधाविहीन होता हुआ निरन्तर विचरा करता है ॥ ५३ ॥ (देखो चित्र नं० ५३)

अथ भालस्थतिलादिलाञ्छनादन्याङ्गेषु तिलादिज्ञानमाह—

नार्या यदा वा पुरुषस्य भाले दक्षे च मध्ये च तथा हि वामे।
तिलादि चिह्नं यदि दृश्यते चेदन्यत्र चिह्नं विदुषा विचिन्त्यम् ॥ ५४ ॥

यदि नारी या नरके भाल में दाहिने, विचले, तथा वामभाग में तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो विद्वान् को अन्य अङ्गों में भी तिल आदि का चिह्न विचारना चाहिये ॥ ५४ ॥ (देखो चित्र नं० ५४)

१—दक्षे च भागे खलु मन्दनिम्ने[8] चन्द्राङ्कपार्श्वे[9] तिलको विभाति।
स्पृशेन्न मन्दं यदि दक्षभागे ब्रूयादुरस्थं[10] तिलकं तदानीम् ॥ ५५ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा के नीचे दाहिने भाग में एक अङ्क के समीप तिल का चिह्न

---

१ सीधी २ शनैश्चरस्य ३ गुरोः ४ मङ्गलस्य ५ सर्पसमाना ६ सूर्यस्य ७ शुक्रस्य ८ शनैश्चर निम्ने ९ एकाङ्कसमीपे १० कथयेदिति ॥

सोहता हो और यदि शनि रेखा को छूता न हो तो दाहिनी ओर वक्षस्थल में टिके हुए तिलको कहना चाहिये ॥ ५५ ॥

२-गुरोश्च निम्ने खलु दक्षभागे युग्माङ्कपार्श्वे तिलकादिकं स्यात्।
नो स्पृश्यते चेत्तु गुरुर्न भौमो दक्षे च पार्श्वे प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ५६ ॥

यदि बृहस्पति की रेखा के नीचे भाग में दाहिनी ओर दो २ अङ्क के समीप तिलक आदि सोहतेहों और यदि गुरुरेखा व भौमरेखा को छूते न हों तो दाहिने पार्श्व में तिल आदि को कहना चाहिये ॥ ५६ ॥

३-दक्षे च भागे खलु भौमनिम्ने वह्न्यङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम्।
नो स्पृश्यते चेद्धरणीतनूजो दक्षे च बाहौ भणितं तिलाद्यम् ॥ ५७ ॥

यदि मङ्गलरेखा के नीचे दाहिने भाग में ३ अङ्कके निकट तिल आदिका चिह्न सोहता हो और यदि वह भौमरेखा को छूता न हो तो दाहिनी भुजाके ऊपर तिल आदि का चिह्न कहाजाता है ॥ ५७ ॥

४-सूरस्य निम्ने खलु दक्षभागे वेदाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम्।
नो स्पृश्यते चेद्दिनपस्य रेखा पृष्ठस्य दक्षे तिलकं वदन्ति ॥ ५८ ॥

यदि सूर्य की रेखा के नीचे दाहिनी ओर ४ अङ्क के निकट तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि वह सूर्यरेखा को स्पर्श न करता हो तो पीठके दाहिने भाग में तिल को कहते हैं ॥ ५८ ॥

५-काव्यस्य निम्ने खलु दक्षभागे बाणाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम्।
नो स्पृश्यते चेद्भृगुजस्य रेखा विद्यात्तिलाद्यं जठरस्य दक्षे ॥ ५९ ॥

यदि शुक्र की रेखा के निचले भाग में दाहिनी ओर पांच ५ अङ्क के पास तिल आदि सोहता हो और यदि पूर्वोक्त रेखा को छूता न हो तो पेटकी दाहिनी ओर तिल आदि जानना चाहिये ॥ ५९ ॥

६-दक्षे च भागे खलु सौम्यनिम्ने शास्त्राङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम्।
नो स्पृश्यते चेच्छशीजस्य रेखा वत्सस्य दक्षे प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ६० ॥

यदि बुधरेखा के निचले भाग में दाहिनी तरफ छः अङ्कके समीप तिल आदिका चिह्न प्रतीत होता हो और यदि पूर्वोक्त रेखा को छूता न हो तो वक्षस्थल के दाहिनी ओर तिल आदिको कहना चाहिये ॥ ६० ॥

७-दक्षे च भागे खलु चन्द्रनिम्ने शैलाङ्कपार्श्वे तिलको विभाति।

---

१ बुधस्यनीचे २ षडङ्कपार्श्वे ३ बुधस्य ४ सप्तमाङ्कपार्श्वे ॥

नो कर्तिता चेत्किल सोमरेखा तुन्दस्य दक्षे तिलकं भणन्ति ॥ ६१ ॥

यदि चन्द्ररेखा के निचले भाग में दाहिनी ओर ७ अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि उक्तरेखा का स्पर्श नहीं करता हो या कटा हुआ नहीं प्रतीत हो तो पेट के दाहिने तरफ़ तिल आदि को कहते हैं ॥ ६१ ॥

८–वामे च भागे खलु सौरिनिम्ने नागाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
स्पृशेन्न मन्दं न गुरुं यदानीं पृष्ठस्य वामे तिलकं वदन्ति ॥ ६२ ॥

यदि शनिरेखा के निचले भाग में बाईं तरफ़ ८ अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि शनैश्चर व बृहस्पति रेखा को स्पर्श नहीं करता हो तो पीठके बाईं ओर तिल आदि को कहते हैं ॥ ६२ ॥

९–वामे च भागे धिषणस्य निम्ने नन्दाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
ब्रूयात्सुधीरो जठरस्य वामे तिलादिचिह्नं भणितं सुधीभिः ॥ ६३ ॥

यदि गुरुरेखा के नीचे वामभाग में ९ नव अङ्क के समीप तिल आदिका चिह्न सोहता हो तो पण्डित को पेट के बाईं ओर तिल आदि का चिह्न कि जिसको सामुद्रिकवेत्ताओं ने बतलाया है कहना चाहिये ॥ ६३ ॥

१०–भालस्य वामे कुर्जकस्यनिम्ने[1] दिशाङ्कपार्श्वे यदि लाञ्छनं चेत् ।
वदेत्तदानीं खलु वामबाहौ चिह्नं तिलाद्यं मुनिभिः प्रणीतम् ॥ ६४ ॥

जिस प्राणी के विशाल भाल में बाईं ओर भौमरेखा के नीचे दश अङ्क के समीप यदि तिलादि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उसकी बाईं भुजा में तिलादिका चिह्न कि जिसको मुनियों ने कहा है उसे बताना चाहिये ॥ ६४ ॥

११–ब्रध्नस्य वामे यदि नीचभागे रुद्राङ्कपार्श्वे तिलकादिकं चेत् ।
वत्सस्य वामे प्रवदेत्तिलाद्यं वेत्ता विपश्चित्पुरुषस्य नूनम् ॥ ६५ ॥

यदि सूर्य के वाम भाग में नीचे तरफ़ ११ अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल में बाईं ओर ज्ञाता पण्डितों को निश्चयकर तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ६५ ॥

१२–वामे च भागे भृगुजस्य निम्ने सूराङ्कपार्श्वे तिलको विभाति ।
नो स्पृश्यते चेच्छशिजो[2] न शुक्रो वामांसके वै प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ६६ ॥

यदि शुक्ररेखा के वामभाग में नीचे तरफ़ १२ बारह अङ्कके समीप तिल आदिका निशान

---

१ भौमस्यनिम्ने २ बुधः ॥

सोहता हो और यदि बुधरेखा व शुक्ररेखा को छूता न हो तो बायें स्कन्ध के ऊपर तिलादि को कहना चाहिये ॥ ६६ ॥

१३–सौम्यस्य निम्ने खलु वामभागे विश्वाङ्कपार्श्वे तिलकादिकं चेत् ।
वदेद्विपश्चिन्मनुजस्य तस्य पार्श्वे च वामे विशदं तिलाद्यम् ॥ ६७ ॥

जिस प्राणी के भाल में बुधरेखा के नीचे बाईं तरफ़ तेरह अङ्क के समीप की जगह में यदि तिल आदि का निशान सोहता हो तो उसके वामपार्श्व में पण्डित को तिल आदि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ६७ ॥

१४–शक्राङ्कपार्श्वे खलु वामभागे चन्द्रस्य निम्ने तिलको यदानीम् ।
स्पृशेन्न भिन्द्यान्न हि चन्द्ररेखां ब्रूयात्तिलाद्यं जठरे च नाभ्याम् ॥६८॥

जिसके भाल में चन्द्ररेखा के नीचे बाईं ओर चौदह अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि पूर्वोक्त रेखा को छूता न हो और न भेदन करता हो तो उसके पेट और तोंदी में तिलादि कहना चाहिये ॥ ६८ ॥

१५–भाले विशाले यदि मध्यदेशे मन्दस्य निम्ने तिलको विभाति ।
नो स्पृश्यते चेत्खलु मन्दरेखां विद्यात्तिलाद्यं जठरस्य मध्ये ॥ ६९ ॥

यदि विशाल भाल में शनिरेखा के नीचे मध्यभाग में तिल आदि का चिह्न प्रतीत होता हो और यदि मन्दरेखा को न छूता हो तो पेट के बीच में तिल आदि का निशान कहना चाहिये ॥ ६९ ॥

१६–कपालमध्ये धिषणस्य निम्ने चिह्नं तिलाद्यं खलु दृश्यते चेत् ।
स्पृशेन्न रेखां सुरवन्दितस्य वक्षस्थले वै प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ७० ॥

ललाट के मध्यभाग में बृहस्पति की रेखा के नीचे यदि तिल आदि का चिह्न देखा जाता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा का स्पर्श नहीं करता हो तो वक्षस्थल में तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ७० ॥

१७–चिह्नं यदानीमलिकस्य मध्ये भौमस्य निम्ने विशदं विभाति ।
स्पृशेन्न रेखां धरणीसुतस्य प्रोच्यात्तिलाद्यं जठरस्य वामे ॥ ७१ ॥

यदि ललाट के मध्यभाग में भौमरेखा के नीचे उज्ज्वलरूप तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो और यदि मङ्गल की रेखा का स्पर्श नहीं करता हो तो पेट के वाम भाग में तिल आदि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ७१ ॥

---

१ विद्वान् २ चतुर्दशाङ्कसमीपे ३ शनिरेखाम् ४ बृहस्पतेः ५ भौमस्य ६ कथयेदिति ॥

१८–लालटमध्ये दिनेपस्य निम्ने तिलादि चिह्नं यदि दृश्यते चेत्।
स्पृशेन्न रेखां दिननायकस्य ब्रूयात्तिलाद्यं जठरस्य मध्ये ॥ ७२ ॥

यदि कपाल के बीच में सूर्यरेखा के नीचे तिल आदि का चिह्न देखाजाता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा को छूता न हो तो उस प्राणी के पेट के मध्य में तिलादि कहना चाहिये ॥ ७२॥

१९–भालस्य मध्ये भृगुजस्य निम्ने तिलादि चिह्नं यदि लक्ष्यते चेत्।
स्पृशेन्न रेखां खलु भार्गवस्य वत्सस्य मध्ये प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ७३ ॥

यदि ललाट के मध्य में शुक्र के नीचे तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा को छूता न हो तो उस प्राणी के वक्षस्थलमें तिलादिको कहना चाहिये ॥७३॥

२०–सौम्यस्य निम्ने हि कपालमध्ये चिह्नं तिलाद्यं यदि दृश्यते चेत्।
स्पृशेन्न रेखां किल भार्गवीयां वत्सस्य निम्ने तिलकं वदन्ति ॥ ७४ ॥

यदि कपाल के मध्य में बुधके नीचे तिल आदि का चिह्न देखा जाता हो और यदि शुक्र-रेखा का स्पर्श नहीं करता हो तो वक्षस्थल के नीचे तिल को कहते हैं ॥ ७४ ॥

२१–चिह्नं यदाचेदलिकान्तराले चन्द्रस्य निम्ने विशदं विभाति।
स्पृशेन्न रेखां क्षणदाधिपस्य ब्रूयादपाने तिलकं तदानीम् ॥ ७५ ॥

यदि ललाट के मध्यभाग में चन्द्ररेखा के नीचे उज्ज्वलरूप चिह्न सोहता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा का स्पर्श न करता हो तो उस प्राणी के गुदादेश में तिलादि चिह्न कहना चाहिये ॥ ७५ ॥

२२–भाले विशाले खलु दक्षभागे मन्दस्य शेषे यदि भाति चिह्नम्।
संस्पृश्यते चेत् खलु सौरिरेखा दक्षोरुसंस्थं प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ७६ ॥

यदि विशाल भाल में दाहिनी तरफ़ शनिरेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न सोहता हो और यदि सौरिरेखा को भलीभांति छूता हो यानी मिलाप करताहो तो दाहिनी ऊरु में तिलादि का निशान कहना चाहिये ॥ ७६ ॥

२३–भालस्य दक्षे धिषणस्य शेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि दृश्यते चेत्।
दक्षोरुसन्धौ मनुजस्य तस्य ब्रूयात्सुधीरो विशदं तिलाद्यम् ॥ ७७ ॥

ललाटकी दाहिनी तरफ़ गुरुरेखा के शेषभाग में यदि तिलादि का निशान देखा जाता हो तो उस प्राणी के दाहिनी ऊरु की सन्धि के ऊपर उज्ज्वल तिलादि का चिह्न पण्डितको कहना चाहिये ॥ ७७ ॥

---

१ सूर्यस्य २ शुक्रस्य ३ वक्षस्थलस्य ४ बुधस्य ५ कपालमध्ये ६ चन्द्रस्य ७ गुदायाम् ॥

२४–ललाटदक्षे खलु भौमशेषे तिलादिचिह्नं यदि लक्ष्यते चेत् ।
वदेद्विदीशो मनुजस्य तस्य दक्षे च बाहावमलं तिलाद्यम् ॥ ७८ ॥

यदि कपाल की दाहिनी तरफ़ मङ्गलरेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी की दाहिनी भुजा के ऊपर निर्मल तिलादि का चिह्न विद्वान् को कहना चाहिये ॥ ७८ ॥

२५–शूरस्य शेषे यदि भालदक्षे चिह्नं तिलाद्यं विशदं विभाति ।
कटस्य दक्षे भणितं तिलाद्यं प्राज्ञैः सुधीरैः खलु मानवस्य ॥ ७९ ॥

यदि ललाटकी दाहिनी तरफ़ सूर्यरेखा के शेषभाग में अमलरूप तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के दाहिनी ओर तिलादिका निशान बड़े धीर पण्डितों ने कहा है ॥ ७९ ॥

२६–भालस्य दक्षे भृगुजस्य शेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि दीप्यते चेत् ।
वत्सस्य मध्ये मनुजस्य तस्य धीरो वदेद्वै तिलकादिचिह्नम् ॥ ८० ॥

यदि भाल की दाहिनी तरफ़ शुक्ररेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न चमकता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के बीच में तिलादिका चिह्न पण्डित को कहना चाहिये ॥ ८० ॥

२७–कपालदक्षे खलु सौम्यशेषे तिलादिचिह्नं यदि दृश्यते चेत् ।
वत्सस्य दक्षे पुरुषस्य तस्य ब्रूयात्तिलाद्यं विदुषामधीशः ॥ ८१ ॥

यदि कपाल की दाहिनी तरफ़ बुधरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न देखाजाता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल की दाहिनी तरफ़ बुधेश को तिलादि चिह्न बताना चाहिये ॥ ८१ ॥

२८–दक्षे ललाटे खलु चन्द्रशेषे विदृश्यते चेत्तिलकादिचिह्नम् ।
ब्रूयाद्विदीशो मनुजस्य तस्य दक्षे तिलाद्यं जठरे च नाभ्याम् ॥ ८२ ॥

यदि ललाट की दाहिनी तरफ़ चन्द्ररेखा के शेषभाग में तिल आदिका चिह्न देखा जाता हो तो उस प्राणी के पेट की दाहिनी ओर या तोंदी के समीप तिलादिका चिह्न कहना चाहिये ॥ ८२ ॥

२९–भालस्य वामे खलु मन्दशेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि लक्ष्यते चेत् ।
प्रोक्तं कवीन्द्रैर्मनुजस्य तस्य पृष्ठस्य वामे विशदं तिलाद्यम् ॥ ८३ ॥

यदि भाल की बाईं तरफ़ शनिरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न लखाजाता हो

तो उस प्राणी की पीठ के वामभाग में उज्ज्वलरूप तिलादिका चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ८३ ॥

३०—भाले विशाले यदि वामभागे देवेज्यशेषे तिलको विभाति ।
धीरो वदेद्वै पुरुषस्य वामे वत्सस्य निम्ने तिलकं विशालम् ॥ ८४ ॥

यदि विशालभाल में बाईं तरफ़ गुरुरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न भासता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के नीचे वामभाग में विशाल तिल का चिह्न पण्डित को बताना चाहिये ॥ ८४ ॥

३१—वामे कपाले खलु भौमशेषे तिलादिचिह्नं यदि दृश्यते चेत् ।
ब्रूयात्सुधीरो मनुजस्य तस्य पृष्ठस्य वामे रुचिरं तिलाद्यम् ॥ ८५ ॥

यदि कपाल की बाईं तरफ़ भौमरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न देखाजाता हो तो उस प्राणी की पीठ की बाईं ओर सुन्दर तिलादिका चिह्न पण्डित को कहना चाहिये ॥ ८५ ॥

३२—वामे ललाटे दिनपस्य शेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि लक्ष्यते चेत् ।
ब्रूयाद् बुधेन्द्रो मनुजस्य तस्य वामांसनिम्ने ललितं तिलाद्यम् ॥८६॥

यदि भाल के बायें तरफ़ सूर्यरेखा के शेषभाग में तिल आदिका चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी के बायें कन्धे के नीचे ललितरूपी तिलादिका चिह्न बुधेश को बताना चाहिये ॥ ८६ ॥

३३—भालस्य वामे भृगुजस्य शेषे संलक्ष्यते चेत्तिलकादिचिह्नम् ।
प्रोक्तं सुधीभिर्मनुजस्य तस्य तुन्दस्य वामे विशदं तिलाद्यम् ॥८७॥

यदि ललाट के वाम ओर शुक्ररेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न भलीभांति लखा जाता हो तो उस प्राणी के पेट के बायें तरफ़ उज्ज्वल तिलादिका निशान पण्डितों ने कहाहै ॥ ८७ ॥

३४—भाले विशाले यदि वामभागे सौम्यस्य शेषे तिलकादिकं चेत् ।
वत्सस्य वामे खलु पञ्जरे वा चिह्नं तिलाद्यं ध्वनितं कवीन्द्रैः ॥ ८८ ॥

यदि विशालभाल में बायें तरफ़ बुधरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के वामभाग में या पांजर में तिलादिका चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ८८ ॥

३५—भालस्य वामे खलु चन्द्रशेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि दृश्यते चेत् ।

प्रोक्तं तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य नाभौ च पार्श्वे जठरस्य वामे ॥ ८९ ॥

यदि ललाट के बायें तरफ़ चन्द्ररेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न देखा जाता हो तो उस प्राणी के तोंदी, पार्श्व और पेट के वामभाग में तिलादि का चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ८९ ॥

३६–दक्षे कपालस्य च नेत्रचुल्ल्यां संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
गीतं तदानीं खलु मानवस्य चिह्नं तिलाद्यं जठरस्य दक्षे ॥ ९० ॥

यदि कपाल के दाहिने तरफ़ नेत्रके ऊपर चूल्हे के निकट तिल आदि का चिह्न भली भांति देखा जाता हो तो उस प्राणी के पेट के दाहिने तरफ़ तिलादि का चिह्न महर्षियों ने गाया है ॥ ९० ॥

३७–पार्श्वे च दक्षे पुरुषस्य भाले भ्रुवः समीपे तिलको विभाति ।
प्रोक्तं तदानीं खलु पण्डितेन्द्रैश्चिह्नं तिलाद्यं कटकोपरिस्थम् ॥ ९१ ॥

जिस प्राणी के विशालभाल में दाहिने तरफ़ भौंह के निकट तिल आदिका निशान यदि सोहता हो तो उसकी कमरके ऊपर टिके हुए तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ९१ ॥

३८–भाले विशाले खलु दक्षपार्श्वे नेत्रान्तिके चेत्तिलकादिकं स्यात् ।
नितम्बदक्षे पुरुषस्य तस्य चिह्नं तदानीं मुनिभिः प्रणीतम् ॥ ९२ ॥

यदि विशालभाल में दायें तरफ़ नेत्र के समीप तिलादिका चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी के चूतड़ों के दाहिनी ओर तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ९२ ॥

३९–भालस्य निम्ने खलु दक्षपार्श्वे चक्षुस्समीपे तिलकालकः स्यात् ।
दक्षे च पार्श्वे किल पञ्जरस्य प्रोक्तं तिलाद्यं पुरुषस्य धीरैः ॥ ९३ ॥

यदि भाल के नीचे दाहिने तरफ़ नेत्र के समीप तिल आदिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी की पांजर के दाहिने भाग में तिलादि का निशान धीरों ने कहा है ॥ ९३ ॥

४०–ललाटनिम्ने खलु दक्षपार्श्वे नेत्रान्तिके चेत्तिलको विभाति ।
दक्षोरुनिम्ने लसितं तिलाद्यं प्रोक्तं पुराणैः पुरुषस्य तस्य ॥ ९४ ॥

यदि ललाट के नीचे दाहिने तरफ़ नेत्र के समीप तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की दाहिनी ऊरु के नीचे लसते हुए तिलादिका चिह्न पुराने कवियों ने कहा है ॥ ९४ ॥

---

१ लोचनसमीपे २ पुरातनैः पण्डितैः ॥

४१–वामे कपाले खलु नेत्रकोणे संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम्।
वामोरुनिम्ने कटिदेशके वा चिह्नं तिलाद्यं कथितं कवीन्द्रैः ॥ ९५ ॥

यदि कपाल के वामभाग में नेत्रकोण के ऊपर तिलादिका निशान देखा जाता हो तो उस प्राणी की बाईं ऊरु के नीचे या कमर पर तिलादिका चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ९५ ॥

४२–वामे ललाटे खलु नेत्रपाते संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम्।
नितम्बवामे मनुजस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं भणितं सुधीभिः ॥ ९६ ॥

यदि ललाट के वामभाग में नेत्रपात के समीप तिलादिका चिह्न भलीभांति लखा जाता हो तो उस प्राणी के चूतड़ों के बायें तरफ़ तिलादिका चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ९६ ॥

४३–भाले विशाले खलु वामनेत्रे विदृश्यते चेत्तिलको यदानीम्।
वामे नितम्बे पुरुषस्य तस्य ज्ञेयं तिलाद्यं कथितं कवीन्द्रैः ॥ ९७ ॥

यदि विशालभाल में बायें नेत्र के ऊपर तिलादिका चिह्न देखाजाता हो तो उस प्राणी के बायें चूतड़ के ऊपर कवीन्द्रों से कहे हुए तिलादिका चिह्न जानना चाहिये॥९७॥

४४–वामाम्बकोणे[1] खलु निम्नभागे कर्णस्य चुल्ल्यां तिलको विभाति।
पृष्ठे च भागे कटकस्य तस्य ख्यातं तिलाद्यं विदुषामधीशैः ॥ ९८ ॥

यदि बायें नेत्रकोण के निचलेभाग में कर्णचूल्हे के ऊपर तिलादिका चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के पीछे तिलादिका निशान पण्डितेन्द्रों ने कहा है ॥ ९८ ॥

४५–गण्डोपरिस्थं खलु वामभागे कर्णस्य निम्ने तिलकादिकं चेत्।
वामोरुनिम्ने पुरुषस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं प्रवदेत्[2]सुधीरः ॥ ९९ ॥

जिसके बाईं ओर कान के नीचे गाल के ऊपर टिके हुए तिलादिका निशान यदि भासता हो तो उस प्राणी की बाईं ऊरु के नीचे तिलादिका चिह्न पण्डितों को कहना चाहिये ॥ ९९ ॥

४६–ऊर्ध्वे च भागे खलु दक्षकर्णे प्रतीयते वै तिलको यदानीम्।
प्रोक्तं तिलाद्यं मनुजस्य तस्य दक्षे च देशे जठरस्य[3] नूनम् ॥ २०० ॥

यदि दाहिने कान के ऊपर तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पेट के दाहिने तरफ़ तिलादिका चिह्न कवियों ने कहा है ॥ २०० ॥

---

१ वामनेत्रकोणस्य २ कथयेत् ३ उदरस्य ॥

४७–विद्योतते[1] चेद्विशदे कपाले दक्षे च कर्णे तिलको यदोर्ध्वे।
वदन्ति विप्राः पुरुषस्य तस्य दक्षे च पार्श्वे तिलकं तदानीम्॥१॥

यदि विशदकपाल में दाहिने कान के ऊपर तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की दाहिनी पार्श्व के नीचे तिलादिका चिह्न बुद्धिमानों ने कहा है॥ १॥

४८–दक्षस्य कर्णस्य च कोणदेशे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम्।
दक्षस्य पार्श्वस्य च निम्न[2]भागे प्रोक्तं तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य॥२॥

यदि दाहिने कान के कोणदेश में तिलादिका निशान भलीभांति लखाजाता हो तो उस प्राणी की दाहिनी पार्श्व के नीचे तिलादिका चिह्न पण्डितों ने कहा है॥ २॥

४९–ऊर्ध्वे च भागे खलु वामकर्णे प्रतीयते चेत्तिलको यदानीम्।
ख्यातं तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य वामे च भागे जठरस्य चिह्नम्॥ ३॥

यदि वामकर्ण के ऊपरले भाग में तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पेट के वामभाग में तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है॥ ३॥

५०–वामस्य कर्णस्य च मध्यदेशे संलक्ष्यते[3] चेत्तिलकालको वै।
वामस्य पार्श्वस्य च निम्नभागे चिह्नं तिलाद्यं भणितं प्रवीणैः॥ ४॥

यदि बायें कान के बिचले भाग में तिलआदि का चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी की बाईं पार्श्व के नीचे तिलादि का चिह्न प्रवीणोंने कहा है॥ ४॥

५१–वामस्य कर्णस्य च निम्न[4]देशे विराजते चेत्तिलको यदानीम्।
वामस्य पार्श्वस्य च निम्नदेशे चिह्नं तिलाद्यं मुनयो वदन्ति॥ ५॥

यदि बायें कान के निचलेदेश में तिलादिका चिह्न भासता हो तो उस प्राणी की बाईं पार्श्व के नीचे तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है॥ ५॥

५२–दक्षाम्बमध्ये खलु निम्नभागे संलक्ष्यते चेत्तिलको हि यस्य।
ब्रूयात्तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य दक्षे च पार्श्वे किल गुह्य[5]कस्य॥ ६॥

जिसके दाहिने नेत्र के मध्यदेश में नीचे तरफ़ तिलादिका निशान यदि लखाजाता हो तो उस प्राणी की गुदा की दाहिनी ओर तिलादिका चिह्न पण्डितों को कहना चाहिये॥ ६॥

---

१ प्रकाशते २ नीचभागे ३ संदृश्यते ४ नीचभागे ५ अपानदेशस्य॥

५३–दक्षाम्बकोणे[1] मनुजस्य यस्य नासाविलग्नं यदि भाति चिह्नम्।
तदा शरीरस्य च मध्यमाङ्गे प्रोक्तं तिलाद्यं वदतां वरेण्यैः[2] ॥ ७ ॥

जिसके दाहिने नेत्रकोणमें नासिकालग्न तिलादि का चिह्न यदि सोहता हो तो उस प्राणी के मध्यमाङ्गमें तिलादिका निशान कहनेवालों में प्रधान पण्डितों ने कहाहै ॥ ७ ॥

५४–दक्षे च भागे खलु नासिकायाः संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम्।
गुह्यप्रदेशे मनुजस्य तस्य प्रोक्तं तिलाद्यं मुनिभिस्तदानीम् ॥ ८ ॥

यदि नासिका के दाहिनेभाग में तिलादिका चिह्न भलीभांति देखाजाता हो तो उस प्राणी की गुदामें तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ८ ॥

५५–वामाम्बनिम्ने[3] पुरुषस्य यस्य घ्राणस्य[4] मध्ये तिलको विभाति।
वामे च देशे खलु गुह्यकस्य[5] चिह्नं तिलाद्यं मुनयो वदन्ति ॥ ९ ॥

जिस प्राणी के वामलोचनके नीचे नासिकाके बीचमें तिलआदि का चिह्न सोहता हो तो उसकी गुदाके वामभागमें तिलादिका चिह्न मुनिलोग कहते हैं ॥ ९ ॥

५६–वामाम्बपातस्य[6] च मध्यदेशे विद्योतते चेत्तिलको यदानीम्।
अपानद्वारे मनुजस्य तस्य वामे च भागे तिलकं वदन्ति ॥ १० ॥

वामलोचनके पातस्थलके मध्यदेश में यदि तिलादिका चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी के गुदाद्वारपर वामभागमें तिलादिका चिह्न पण्डितलोग कहते हैं ॥ १० ॥

५७–वामस्य नेत्रस्य च निम्नदेशे विराजते चेत्तिलको यदानीम्।
गुदस्य द्वारे खलु वामभागे चिह्नं तिलाद्यं त्वपरं भणन्ति ॥ ११ ॥

यदि वामलोचन के निचले भागमें तिलादिका चिह्न भासता हो तो उस प्राणी के गुदाद्वार के बायेंभाग में पण्डितलोग अपर तिलादि का चिह्न कहते हैं ॥ ११ ॥

५८–कपालपार्श्वे खलु दक्षनेत्रपातस्य रम्भे ह्यथवा च मध्ये।
विद्योतते चेत्तिलकालको वै तुन्दस्य दक्षे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ १२ ॥

यदि कपाल के पार्श्व में दाहिने नेत्रपात के आरम्भ में अथवा मध्य में तिल आदिका निशान प्रकाशता है तो पेट के दाहिनेभाग में अपर तिलादि का निशान कहा है ॥ १२ ॥

५९–दक्षाम्बपातो परितोऽथवा चेदारम्भदेशे खलु नासिकायाः।

---

१ दक्षिणनेत्रकोणे २ प्रधानैः ३ वामनेत्रनीचे ४ नासिकामध्ये ५ गुदायाः ६ वामलोचनपातस्य ॥

संलक्ष्यते वै तिलको हि तस्य नाभ्याश्च दक्षे तिलकं वदन्ति ॥ १३ ॥

यदि दाहिने नेत्रपात के ऊपर अथवा नासिका के आरम्भदेश में तिलादि का निशान देखाजाता हो तो उस प्राणी की नाभि के दाहिनेभाग में तिलादि को कहते हैं ॥ १३ ॥

६०–वामाम्बपातस्य च मध्यदेशे आरम्भके वा तिलकादिकं चेत् ।
तुन्दस्य वामे पुरुषस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं कवयो भणन्ति ॥ १४ ॥

यदि दाहिने या बायें नेत्रपात के मध्यदेश या आरम्भदेश में तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पेट के वामभाग में तिलादि का चिह्न कवियों ने कहा है ॥ १४ ॥

६१–सव्याम्बपातस्य च मध्यभागे किंवा च शेषे तिलको विभाति ।
ब्रूयात्सुधीरो मनुजस्य तस्य वामे च पार्श्वे कटकस्य चिह्नम् ॥ १५ ॥

यदि वामलोचन के पातस्थल के बिचलेभाग में अथवा शेषभाग में तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की कमरके बायें तरफ़ तिलादिका चिह्न पण्डितको कहना चाहिये ॥ १५ ॥

६२–नार्या यदा वा पुरुषस्य वक्त्रे दक्षाम्बपातोपरितस्तिलाद्यम् ।
वदेत्सुचिह्नं मनुजस्य तस्य मुष्कस्य पार्श्वे कटिदक्षपार्श्वे ॥ १६ ॥

जिस नारी या नरके वदन में दाहिने नेत्रपात के ऊपर तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के गलहरी या कमर के दाहिने तरफ़ तिलादिका चिह्न कहना चाहिये ॥ १६ ॥

६३–दक्षाम्बपातस्य च मध्यदेशे संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
दक्षाङ्गमध्ये विशदं तिलाद्यं विद्वद्भिराद्यैर्भणितं तदानीम् ॥ १७ ॥

यदि दाहिने नेत्रपात के मध्यदेश में तिलादिका चिह्न भलीभांति देखाजाता हो तो उस प्राणी के दाहिने अङ्ग के बीच विशद तिलादि का चिह्न आद्य विद्वानों ने कहा है ॥ १७ ॥

६४–दक्षाम्बपातस्य च शेषदेशे नासान्तिके चेत्तिलको विभाति ।
कटिप्रदेशस्य च निम्नभागे चिह्नं तिलाद्यं कथितं नरस्य ॥ १८ ॥

यदि दाहिने नेत्रपात के शेषदेश में नासा के समीप तिलादिका चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के निचलेभाग में तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ १८ ॥

६५–वामाम्बपातस्य च निम्नदेशे चिह्नं यदानीं विशदं विभाति।
कुचस्य वामे मनुजस्य तस्य विद्यात्तिलाद्यं विदुषामधीशः॥ १९॥

यदि वामनेत्रपात के नीचेभाग में विशद तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के कुचके वामभाग या गलहरी के बायें तरफ़ तिलादि का चिह्न बुधेशों को जानना चाहिये॥ १९॥

६६–वामाम्बपातस्य च मध्यदेशे विराजते चेत्तिलको यदानीम्।
ब्रूयाद्विपश्चित्पुरुषस्य तस्य गुदान्तिके वै विशदं तिलाद्यम्॥ २०॥

यदि वामनेत्रपात के मध्यदेश में तिलादि का चिह्न विराजता हो तो उस प्राणी की गुदाके निकट विशद तिलादि का निशान पण्डित को कहना चाहिये॥ २०॥

६७–आरम्भदेशे खलु सव्यनेत्रे घ्राणस्य मूले यदि भाति चिह्नम्।
ब्रूयात्तदानीं मनुजस्य तस्य कटेश्च वामे त्वपरं तिलाद्यम्॥ २१॥

यदि वामनेत्र के आरम्भदेश में या नासिका की मूल में तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के वामभाग में अपर तिलादि को कहना चाहिये॥ २१॥

६८–दक्षाम्बकोणस्य च निम्नदेशे समीक्ष्यते चेत्तिलको हि यस्य।
वदेद् बुधेशः खलु पञ्जरस्य दक्षे च पार्श्वे विशदं तिलाद्यम्॥ २२॥

जिस प्राणी के दाहिने नेत्रकोण के निचलेभाग में यदि तिलादि का निशान देखा जाता है तो उसके पांजर के दाहिने तरफ़ विशदंतिलादि का चिह्न बुधेशों को कहना चाहिये॥ २२॥

६९–दक्षस्य नेत्रस्य च मध्यदेशे विदृश्यते चेत्तिलको यदानीम्।
विज्ञा महान्तो मनुजस्य तस्य गुदाप्रदेशे तिलकं वदन्ति॥२३॥

यदि दाहिने नेत्र के मध्यभाग में तिलआदि का निशान देखाजाता हो तो उस प्राणी के गुदाप्रदेश में तिलादि का चिह्न बड़े विज्ञोंने कहा है यानी महात्मा विज्ञलोग कहते हैं॥ २३॥

७०–वामाम्बनिम्नस्य च मध्यदेशे प्रतीयते चेत्तिलको यदानीम्।
प्राज्ञैः सुधीरैः पुरुषस्य तस्य कुचस्य वामे भणितं तिलाद्यम्॥२४॥

यदि वामलोचन के नीचे मध्यदेश में तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होताहो तो उस प्राणी के कुच के वामभाग में सुधीर प्राज्ञलोगों ने तिलादि का चिह्न कहा है॥ २४॥

७१–वामाम्बपातस्य च निम्नदेशे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम्।

गुदाप्रदेशस्य च वामपार्श्वे चिह्नं तिलाद्यं भणितं सुधीभिः ॥ २५ ॥

यदि वामनेत्रपात के नीचेभाग में तिलादि का निशान लखा जाता हो तो उस प्राणी की गुदा के बायें तरफ़ तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ २५ ॥

७२–वामाम्बपातस्य च कोणदेशे तथा च मध्ये तिलको विभाति ।
गुह्याङ्गमध्ये मनुजस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं मुनयो वदन्ति ॥ २६ ॥

यदि वामनेत्रपात के कोणदेश में एवं नेत्रपात के निचले भाग में तिलादि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी की गुदा के विचले भाग में तिलादि का निशान मुनिलोग कहते हैं ॥ २६ ॥

७३–वामाम्बनिम्ने खलु पातमध्ये नासान्तिके वा तिलको विभाति ।
ब्रूयात्तदानीं पुरुषस्य तस्य मुष्कस्य वामे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ २७ ॥

यदि वामलोचन के नीचे पात के मध्य में या नासा के निकट तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की गलहरी के वामभाग में अपर तिलादि का चिह्न पण्डित को कहना चाहिये ॥ २७ ॥

७४–भालस्य पार्श्वे पुरुषस्य यस्य दक्षाम्बमध्ये यदि भाति चिह्नम् ।
वत्सस्य दक्षे जठरान्तिके वा प्रोक्तं तिलाद्यं विशदं सुधीभिः ॥ २८ ॥

जिसके भाल के पार्श्व में दाहिने लोचन के बीच में यदि चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के दाहिने तरफ़ या पेट के पास विशद तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ २८ ॥

७५–दक्षाम्बकोणे खलु नेत्रमध्ये नासान्तिके वा तिलको विभाति ।
वत्सस्य दक्षे पुरुषस्य चाग्रे संकीर्तितं वै विशदं तिलाद्यम् ॥ २९ ॥

यदि दाहिने नेत्रकोण यानी नेत्र के मध्य में या नासिका के समीप तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के दाहिने भाग व अग्रभाग में विशद तिलादि का चिह्न कहा है ॥ २९ ॥

७६–वामाम्बकोणे पुरुषस्य भाले विद्योतते चेत्तिलको यदानीम् ।
वत्सस्य वामे विशदं तिलाद्यं संभाषितं वै वदतां वरेण्यैः ॥ ३० ॥

जिसके भाल में वामलोचन के कोण में तिलादि का चिह्न यदि प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के बायें तरफ़ विशद तिलादि का चिह्न कहनेवालों में से प्रधान पण्डितों ने कहा है ॥ ३० ॥

७७–वामाम्बकोणस्य तु चाग्रभागे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम्।
वामे च पार्श्वे खलु वत्सकस्य संवर्णितं वै त्वपरं तिलाद्यम्॥ ३१॥

यदि वामलोचनकोण के अग्रभाग में तिलादि का चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के बायें तरफ़ अपर तिलादि का चिह्न मुनियों ने कहा है॥ ३१॥

७८–वक्रस्य दक्षे खलु नासिकाया रन्ध्रस्य निम्ने तिलको विभाति।
ऊर्ध्वे च भागे किल दक्षिणांसे चिह्नं तिलाद्यं मुनयो भणन्ति॥ ३२॥

यदि मुख के दाहिने नासिकारन्ध्र के नीचे तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के दाहिने कन्धा के ऊपर तिलादि का चिह्न मुनिलोग कहते हैं॥ ३२॥

७९–ओष्ठस्य शेषे खलु दक्षनासाशेषे च भागे तिलको यदानीम्।
ब्रूयात्तदानीं पुरुषस्य तस्य कुचोर्ध्वदेशे[1] विशदं तिलाद्यम्॥ ३३॥

यदि ओष्ठ के शेषभाग या दक्षिण नासा के शेषभाग में तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के कुच के ऊपर या गलहरी के ऊपर विशद तिलादि का चिह्न कहना चाहिये॥ ३३॥

८०–दक्षे च भागे खलु नासिकाया ऊर्ध्वस्थितश्चेत्तिलको विभाति।
विद्याद्बुधेन्द्रो मनुजस्य तस्य गुह्याङ्गदक्षे त्वपरं तिलाद्यम्॥ ३४॥

यदि दाहिने तरफ़ नासिका के ऊपर तिलादि का निशान भासता हो तो उस प्राणी की गुदा के दाहिने तरफ़ अपर तिलादिका चिह्न बुधेन्द्र को जानना चाहिये॥ ३४॥

८१–वामे च भागे खलु नासिकायाः शेषे च देशे यदि लाञ्छनं चेत्।
वत्सस्य वामे त्वपरं तिलाद्यं गायन्ति विप्रा गुणगौरवाढ्याः॥ ३५॥

यदि बायें तरफ़ नासिका के शेष देश में तिलादि का चिह्न देखा जाता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के वामभाग में अपर तिलादि का चिह्न गुणगौरवसंपन्न ब्राह्मणों ने गाया है॥ ३५॥

८२–घ्राणस्य निम्ने खलु वामभागे वक्रस्य मध्ये ह्यथवा तिलश्चेत्।
ब्रूयात्तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य गुह्यस्य मेढ्रस्य च मध्यदेशे॥ ३६॥

---

१ मुष्कोर्ध्वदेशे इति वा पाठः॥

यदि नासिका के नीचे वामभाग में अथवा वदन के बीच में तिलआदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी की गुदा व लिङ्ग के बीच में तिलादि का निशान कहना चाहिये ॥ ३६ ॥

८३–वामे च भागे खलु नासिकाया मध्यस्थले चेत्तिलको विभाति ।
गुह्यस्य मेढ्रस्य च मध्यदेशे विद्वद्भिराद्यैर्भणितं तिलाद्यम् ॥ ३७ ॥

यदि बायें तरफ़ नासिका के बिचले भाग में तिल आदि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की गुदा या लिङ्ग के मध्यभाग में तिलादि का चिह्न आदि के विद्वानों ने कहा है ॥ ३७ ॥

८४–भाले विशाले मनुजस्य यस्य नासाग्रभागे तिलको विभाति ।
वदेत्तदानीं वदतां प्रधानो गुह्याग्रभागे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ३८ ॥

जिसके विशालभाल में नासिका के अग्रभाग में तिलादि का चिह्न सोहता है तो उस प्राणी की गुदा के अग्रभाग में अपर तिलादि का निशान बुधेशों को कहना चाहिये ॥ ३८ ॥

८५–दक्षे च भागे खलु नासिकाया नासापुटे चेत्तिलको यदानीम् ।
विद्यात्तदानीं पुरुषस्य तस्य गुह्याङ्गदक्षे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ३९ ॥

यदि नासिका के दाहिने तरफ़ नासापुट के बीच में तिलादि का चिह्न भासता हो तो उस प्राणी की गुदा के दाहिने भाग में अपर तिलादि का चिह्न जानना चाहिये ॥ ३९ ॥

८६–वामे च पार्श्वे खलु नासिकाया मध्ये च नासापुटकस्य किंवा ।
विद्योतते[1] चेत्तिलको यदानीं लिङ्गस्य वामे भणितं तिलाद्यम् ॥४०॥

यदि नासिका के वामपार्श्व में या नासापुट के मध्य में तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के लिङ्ग के वामभाग में तिलादिका चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥४०॥

८७–दक्षे च भागे खलु नासिकायाः पुटोपरिस्थस्तिलको विभाति ।
विज्ञा[2] महान्तो[3] मनुजस्य तस्य गुह्याङ्गदेशे तिलकं वदन्ति ॥ ४१ ॥

यदि दाहिने तरफ़ नासापुट के ऊपर टिका हुआ तिलका निशान सोहता हो तो उस प्राणी के गुह्याङ्गदेश में तिलादि का चिह्न पूज्य पण्डितलोग कहते हैं ॥ ४१ ॥

८८–नासोपरिस्थस्तिलको विभाति दक्षे च भागे पुरुषस्य यस्य ।
गुह्यस्य लिङ्गस्य च मूलमध्ये दक्षे तिलाद्यं भणितं सुधीभिः ॥ ४२ ॥

---

१ प्रकाशते २ विशेषज्ञातारः ३ पूज्याः ॥

जिसके दाहिने तरफ़ नासिका के ऊपर टिका हुआ तिलआदि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी के गुदा व लिङ्ग की मूल के मध्य में दाहिनी ओर तिलादि का निशान पण्डितों ने कहा है ॥ ४२ ॥

८९–घ्राणोपरिस्थः खलु वामभागे विराजते चेत्तिलको यदानीम् ।
गुदस्य मेढ्रस्य च मूलमध्ये वामे तिलाद्यं कवयो गदन्ति ॥ ४३ ॥

जिसके बायें तरफ़ नासिका के ऊपर टिका हुआ तिलादि का चिह्न यदि विराजता हो तो उस प्राणी की गुदा व लिङ्ग की मूल के मध्य में बाईं ओर तिलादिका निशान कविलोग कहते हैं ॥ ४३ ॥

९०–प्रान्ते यदानीं खलु वामगण्डे प्रतीयते चेद्विशदं तिलाद्यम् ।
गुह्याङ्गनिम्ने किल दक्षभागे चिह्नं तिलाद्यं कथितं कवीन्द्रैः ॥ ४४ ॥

यदि वामगण्ड के प्रान्तदेश में उज्ज्वलरूप तिलादि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी के दाहिने तरफ़ गुदा के नीचे तिलादि का चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ४४ ॥

९१–वामे च भागे वदनस्य यस्य चिह्नं तिलाद्यं यदि लक्ष्यते चेत् ।
ऊर्ध्वे च भागे किल वामपाणौ वदेत्सुधीरो विशदं तिलाद्यम् ॥ ४५ ॥

जिसके वदन के वामभाग में तिलादि का चिह्न यदि लखाजाता हो तो उस प्राणी के बायें हाथ के ऊपर विशद तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ४५ ॥

९२–ऊर्ध्वस्थले चेदधरस्य[1] मध्ये संलक्ष्यते[2] वै तिलको यदानीम् ।
गीतं तदानीं मनुजस्य तस्य गुह्याग्रभागे[3] त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ४६ ॥

यदि ओष्ठके ऊपर बिचले भाग में तिलादि का चिह्न लखा जाता हो तो उस प्राणी की गुदा के अग्रभाग में अपर तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ४६ ॥

९३–निम्नौष्ठमध्ये[4] यदि भाति चिह्नं दक्षे च जानौ भणितं[5] तिलाद्यम् ।
नो मध्यदेशे खलु वामजानौ दक्षे च दृष्टे किल दक्षजानौ ॥ ४७ ॥

यदि निचले ओष्ठ के मध्य में तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की दाहिनी जानु में तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है और यदि मध्यदेश में न हो तो बाईं जानु में तिलादि को कहना चाहिये और यदि दाहिनी तरफ़ देखा जाता हो तो दाहिनी घुटनू में तिलादि चिह्न चतुरों ने कहा है ॥ ४७ ॥

---

१ ओष्ठस्य २ दृश्यते ३ गुदाग्रभागे ४ नीचाधरोष्ठमध्ये ५ कथितम् ॥

४४–मध्यस्थले चेच्चिबुकस्य यस्य प्रतीयते वै तिलको यदानीम् ।
पादोपरिस्थं तिलकं तदानीमाहुर्मुनीन्द्रा मनुजस्य तस्य ॥ ४८ ॥

जिसकी चिबुक (ठोढ़ी) के बीच में तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पाँवों के ऊपर टिके हुए तिलादि का चिह्न मुनीन्द्रों ने कहा है ॥ ४८ ॥

४५–वक्रे विशाले चिबुकस्य मध्ये संदृश्यते चेत्तिलकालको वै ।
जङ्घोपरिस्थं त्वपरं तिलाद्यं वदन्ति विप्रा वदतांवरेण्याः ॥ ४९ ॥

विशाल वदन में ठोढ़ी के बीच में यदि तिलादि का चिह्न देखा जाता हो तो कहने वालों में प्रधान ब्राह्मणलोग जांघके ऊपर टिके हुए अपर तिलादि को कहते हैं ॥ ४९ ॥

४६–दक्षे च भागे चिबुकस्य शेषे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
ब्रूयात्तदानीं पुरुषस्य तस्य ऊरोश्च संधावपरं तिलाद्यम् ॥ ५० ॥

यदि दाहिने भाग में ठोढ़ी के शेष देश में तिलादि का चिह्न लखा जाता हो तो उस प्राणी की ऊरु की संधि में अपर तिलादि का निशान कहना चाहिये ॥ ५० ॥

४७–वामे च भागे चिबुकस्य यस्य प्रतीयते चेत्तिलको यदानीम् ।
सन्धिस्थलस्थं खलु सक्थिनोश्च चिह्नं तिलाद्यं त्वपरं वदन्ति ॥ ५१ ॥

जिसकी ठोढ़ी के वामभाग में यदि तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो ऊरु (निरोंह) की सन्धि में टिके हुए अपर तिलादि चिह्न को कहते हैं ॥ ५१ ॥

४८–ऊर्ध्वस्थले चेत्खलु कण्ठनल्या विराजते वै तिलको हि यस्य ।
गुह्याङ्गमध्ये किल नाभिदेशे गायन्ति चिह्नं त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ५२ ॥

जिसकी कण्ठनली के ऊपरले भाग में यदि तिलादि का चिह्न सोहता हो तो गुदा के मध्य में या तोंदी के ऊपर अपर तिलादि का चिह्न कविलोग कहते हैं ॥ ५२ ॥

४९–गलस्य नल्याः खलु दक्षपार्श्वे[2] चिह्नं तिलाद्यं विशदं[3] विभाति ।
वदेत्तदानीं[4] मनुजस्य तस्य ऊरोश्च दक्षे[5] भणितं तिलाद्यम् ॥ ५३ ॥

यदि गले की नली के दाहिने तरफ़ विशद तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की ऊरु के दाहिने भाग में तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ५३ ॥

---

१ वदन्ति २ दक्षिणभागे ३ उज्ज्वलवर्णम् ४ कथयेत् ५ दक्षिणे ॥

१००—कण्ठस्य नल्याः खलु वामपार्श्वे[1] प्रतीयते[2] चेद्विशदं तिलाद्यम् ।
ब्रूयात्सुचिह्नं पुरुषस्य तस्य ऊरोश्च सन्धेः किल सव्यदेशे[3] ॥ ५४ ॥

यदि कण्ठनली के वामभाग में उज्ज्वलरूप तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी की ऊरु सन्धि के बायें तरफ़ तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ५४ ॥

इति तिलादिज्ञानम् ॥

भालाङ्कविज्ञानमिदं मयोक्तं नारीनराणां शुभदं शिवेशे ! ।
अभ्यासमात्रेण नराः सुपूज्याः भूयासुरुर्व्यां सकलप्रियास्ते ॥ ५५ ॥

अहो शिवेशे ! यह भालरेखा के सुलक्षणों का विज्ञान हमने कहा है, जो कि नर नारी गणों को शुभदायक है कि जिसके अभ्यासमात्र से मनुष्य लोग महापूजनीय होते हैं और वेही लोग भूमण्डल में सबों के प्यारे होंगे ॥ ५५ ॥

कल्याणं कलयत्वीशः पठतस्सादरात् प्रिये ।
लोके धन्यतरो भूयान्मङ्गलानां च मङ्गलः ॥ ५६ ॥

अहो प्रिये ! आदर समेत पढ़ते हुए मनुष्य को मङ्गलों का मङ्गलरूप होकर ईश नामक परमेश्वर कल्याण को देवे और वह, पुरुष लोक में धन्यवाद देने योग्य होवेगा ॥ ५६ ॥

इति श्रीमद्द्विजवर शक्तिधरसंकलित सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे भालरेखासुलक्षण-
वर्णनंनाम प्रथमोऽङ्कः समाप्तिं पफाणेति शम् ॥

समाप्तोऽयं प्रथमोङ्कः ॥

---

१ वामभागे २ लक्ष्यते ३ वामदेशे ॥

अथ सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे द्वितीयाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
मङ्गलाचरणम्	१
सामुद्रिकस्वप्नाध्याये सुस्वप्नानाह ..	१
अथ दुस्वप्नानाह	१३
मृत्युसूचकसामुद्रिकमाह	१८
शारीरकाध्यायो व्याख्यायते	३९
सृष्टिक्रमो व्याख्यायते	३९
प्रकृतिस्वरूपमाह	३९
शिवस्वरोदयाध्यायः	४६
शिष्यलक्षणम्	४७
विपरीतलक्षणम्	५८
अथ इडा	६१
अथ पिङ्गला	६३
अथ सुषुम्ना	६४
स्थानपरत्वात्तत्त्वज्ञानम्	७०
स्वादगत्या तत्त्वज्ञानम्	७०
वशीकरणम्	९१
गर्भप्रकरणम्	९१
संवत्सरप्रकरणम्	९५
रोगप्रकरणम्	९५
कालप्रकरणम्	९७
इति शिवस्वरोदयाध्यायः	११०
अथ कविवंशवर्णनमाह	११०
ग्रन्थपूर्तिः	११२
इति सामुद्रिकस्योत्तरार्द्धे द्वितीयाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।	

अथ सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे द्वितीयाङ्कमाह ॥

मङ्गलाचरणम् ॥

नत्वाहं गजतुण्डकं गणपतिं सौख्यप्रदं शाम्भवं
धन्यं धर्मधरं धराधिपनुतं सिन्दूरभालाङ्कितम् ।
विघ्नव्यूहहरं परेशनिरतं भूत्यादिभिः सेवितं
स्वप्नाध्याययुतं स्वरोदयगतं ज्ञानं ब्रुवे विन्मुदे ॥ १ ॥

सामुद्रिकस्वप्नाध्याये सुस्वप्नानाह—

नन्द उवाच ।

केन स्वप्नेन किं पुण्यं केन पुंसां भवेत्सुखम् ।
कोपि कोपि च सुस्वप्नस्तत्सर्वं कथय प्रभो ॥ १ ॥

नन्दजी बोले कि, हे प्रभो ! किस स्वप्न से पुरुषों को क्या पुण्य होता है ? और किस स्वप्न से क्या सुख होता है और कौन कौन सुस्वप्न हैं उन सबों को कहिये ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

वेदेषु सामवेदश्च प्रशस्तः सर्वकर्मसु ।
तत्रैव काण्वशाखायां पुण्यकाण्डे मनोहरे ॥ २ ॥

श्रीभगवान्‌जी बोले कि, वेदों में सामवेद सब कर्मों में प्रशस्त है वहां ही काण्वशाखा में मनोहर पुण्यकाण्ड के उपस्थित होने में ॥ २ ॥

सुव्यक्तो यश्च सुस्वप्नः शश्वत्पुण्यफलप्रदः ।
तत्सर्वं लिखितं तात ! कथयामि निशामय ॥ ३ ॥

जो सुस्वप्न प्रकटित है वह निरन्तर पुण्यफल का दाता है हे तात ! वह सब लिखा है मैं कहता हूं सुनिये ॥ ३ ॥

स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि बहुपुण्यफलप्रदः ।
स्वप्नाध्यायं नरः श्रुत्वा गङ्गास्नानफलं लभेत् ॥ ४ ॥

स्वप्नाध्यायको मैं कहूंगा जोकि बहुत से पुण्यफल का प्रदाता है उस स्वप्नाध्यायको सुनकर मनुष्य गङ्गास्नानका फल पाता है ॥ ४ ॥

स्वप्नस्तु प्रथमे यामे संवत्सरफलप्रदः ।
द्वितीये चाष्टभिर्मासैस्त्रिभिर्मासैस्तृतीयके ॥ ५ ॥

जो स्वप्न पहले पहर में देखाजाता है वह सालभरे में फलदायक होता है व जो दूसरे पहर में देखाजाता है वह आठ महीना में फल देता है और जो तीसरे पहर में स्वप्न देखाजाता है वह तीन महीना में फलदायक होता है ॥ ५ ॥

चतुर्थे चार्धमासेन स्वप्नः स्यात्तु फलप्रदः ।
दशाहे फलदः स्वप्नोऽप्यरुणोदयदर्शने ॥ ६ ॥

जो स्वप्न चौथे पहर में देखा जाता है वह आधे महीना (पन्द्रह दिन) में फल को देता है और जो स्वप्न अरुणोदय के दर्शन में देखाजाता है वह दश दिन में फलदायक होता है ॥ ६ ॥

प्रातः स्वप्नश्च फलदस्तत्क्षणं यदि बोधितः ।
दिने मनसि यद्दृष्टं तत्सर्वं च लभेद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥

जो स्वप्न प्रभातकाल देखाजाता है वह जगनेपर उसी क्षण फलको देता है दिन में जो देखागया वा मनमें विचारा गया है उस सबको निश्चयकर पाता है ॥ ७ ॥

चिन्ताव्याधिसमायुक्तो नरः स्वप्नं च पश्यति ।
तत्सर्वं निष्फलं तात प्रयात्येव न संशयः ॥ ८ ॥

हे तात ! जो प्राणी चिन्ता व व्याधि से संयुक्त होता हुआ स्वप्न को देखता है वह संपूर्ण निस्सन्देह निष्फलता को प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

जडो मूत्रपुरीषेण पीडितश्च भयाकुलः ।

दिगम्बरो मुक्तकेशो न लभेत्स्वप्नजं फलम् ॥ ९ ॥

जो प्राणी स्वप्न में जड़ होकर पेशाब व दस्त से पीड़ित व भय से व्याकुल व नङ्गा तथा खोड़े केशवाला होजाता है वह स्वप्न से उपजेहुए फल को नहीं पाता है ॥ ९ ॥

दृष्ट्वा स्वप्नं च निद्रालुर्यदि निद्रां प्रयाति च ।
विमूढव्यक्तिश्चेद्रात्रौ न लभेत्स्वप्नजं फलम् ॥ १० ॥

जो निद्रावान् प्राणी स्वप्नको देखकर निद्राको प्राप्त होता है और जो रात्रि में विमूढ़ होजाता है वह स्वप्नज फलको नहीं पाता है ॥ १० ॥

उक्त्वा काश्यपगोत्रे च विपत्तिं लभते ध्रुवम् ।
दुर्गते दुर्गतिं याति नीचे व्याधिं प्रयाति च ॥ ११ ॥

काश्यपगोत्र में कहकर निश्चय विपत्ति को पाता है, दुर्गत में दुर्गति को पाता है और नीच में व्याधि को प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

शत्रौ भयं च लभते मूर्खे च कलहो भवेत् ।
कामिन्यां धनहानिः स्याद्रात्रौ चोरभयं भवेत् ॥ १२ ॥

वैरी के देखने में भय को पाता है, मूर्ख के देखने में लड़ाई होती है व कामिनी में धन का विनाश होता है और रात्रि में चोरों का भय होता है ॥ १२ ॥

निद्रायां लभते शोकं पण्डिते वाञ्छितं फलम् ।
न प्रकाश्यश्च सुस्वप्नः पण्डितैः काश्यपे व्रज ॥ १३ ॥

स्वप्न में निद्रा के आजाने पर शोक को पाता है, पण्डित के देखने पर वाञ्छित फल को पाता है और पण्डितों को भला स्वप्न प्रकाशित नहीं करना चाहिये इसलिये काश्यपगोत्रीय के पास चलो ॥ १३ ॥

गवां च कुञ्जराणां च हयानां च व्रजेश्वर ।
प्रासादानां च शैलानां वृक्षाणां च तथैव च ॥ १४ ॥
आरोहणं च धनदं भोजनं रोदनं तथा ।
प्रतिगृह्य तथा वीणां सस्याढ्यां भूमिमालभेत् ॥ १५ ॥

हे व्रजेश्वर ! स्वप्न में बैल, हाथी, घोड़ा, देवमन्दिर, राजमन्दिर, पहाड़ और वृक्षों पर चढ़े तो धनदायक होता है तथा भोजन व रोदन करे और वीणा को लेकर बजावे तो सस्यसंपन्न भूमि को पाता है ॥ १४ । १५ ॥

शस्त्रास्त्रेण यदा विद्धो व्रणेन कृमिणा तथा ।
विष्ठया रुधिरेणैव संयुक्तोप्यर्थमालभेत् ॥ १६ ॥

जो स्वप्न में शस्त्र व अस्त्र से विध जावे घाव, कृमि, विष्ठा और रुधिर से संयुक्त होजावे तो वह धन को पाता है ॥ १६ ॥

स्वप्नेऽप्यगम्यागमनं भार्यालाभं करोति च ।
मूत्रसिक्तं पिबेच्छुक्रं नरकं च विशत्यपि ॥ १७ ॥
नगरं प्रविशेन्नक्तं समूत्रां वा सुधां पिबेत् ।
शुभवार्तामवाप्नोति विपुलं चार्थमालभेत् ॥ १८ ॥

जो स्वप्न में अगम्यागमन करता है तो भार्या को पाता है, जो मूत्रसिक्त बीज को पीता है और नरक में घुसता है व रात्रि में नगर को जाता है या मूत्रसमेत सुधा को पीता है तो वह शुभवार्ता को पाता हुआ बड़ेभारी धन को लहता है ॥ १७ । १८ ॥

गजं नृपं सुवर्णं च वृषभं धनुमेव च ।
दीपमन्नं फलं पुष्पं कन्यां छत्रं रथं ध्वजम् ॥ १९ ॥
कुटुम्बं लभते दृष्ट्वा कीर्तिं च विपुलां श्रियम् ।
पूर्णकुम्भं द्विजं वह्निं पूपं ताम्बूलमन्दिरम् ॥ २० ॥
शुक्लधान्यं नटं वेश्यां दृष्ट्वा श्रियमवाप्नुयात् ।
गोक्षीरं च घृतं दृष्ट्वा चार्थं पुण्यं धनं लभेत् ॥ २१ ॥

हाथी, राजा, सोना, बैल, धनुष, दीपक, अन्न, फल, फूल, कन्या, छाता, रथ, ध्वजा और कुटुम्ब को देख कर यश और घनी लक्ष्मी को पाता है तथा पूर्णकुम्भ, ब्राह्मण, अग्नि, पुआ, ताम्बूल, मन्दिर, सफ़ेद धान्य, नट और वेश्या को देख कर लक्ष्मी को पाता है और गऊ का दूध व घी को देख कर अर्थसिद्धि, पुण्य व धन को पाता है ॥ १९ । २१ ॥

पायसं पद्मपत्रे च दधि दुग्धं घृतं मधु ।
मिष्टान्नं स्वस्तिकं भुक्त्वा ध्रुवं राजा भविष्यति ॥ २२ ॥
पक्षिणां मानुषाणां च भुङ्क्ते मांसं नरो यदि ।
बह्वर्थं शुभवार्तां च लभते वाञ्छितं फलम् ॥ २३ ॥

कमल के पत्ते पर खीर, दही, दूध, घी, शहद, मीठा अन्न और स्वस्तिकों का भोजन

र निश्चय कर राजा होता है पक्षी व मनुष्यों का मांस जो प्राणी खाता है वह बहुत ला न, शुभवार्ता और वाञ्छितफल को पाता है ॥ २२ । २३ ॥

छत्रं वा पादुकां वापि लब्ध्वाध्वानं च गच्छति ।
असिं च निर्मलं तीक्ष्णं तत्तथैव भविष्यति ॥ २४ ॥
भेलया संतरेद्यो हि समधानं भविष्यति ।
दृष्ट्वा च फलिनं वृक्षं धनमाप्नोति निश्चितम् ॥ २५ ॥

छाता वा खड़ाऊं को पाकर मार्गपर चले या पैनी, निर्मल तलवार लेकर चले और ो भेला (घन्नई) आदि से तरता है वह प्रधान होता है और फले हुए वृक्षको देखकर नको निश्चय कर पाता है ॥ २४ । २५ ॥

यस्य श्वेतेन सर्पेण दश्यते दक्षिणे भुजे ।
सोऽचिराल्लभते भार्यां विनीतां प्रियवादिनीम् ॥ २६ ॥
सर्पेण भक्षितो यो हि अर्थलाभश्च तद्भवेत् ।
स्वप्ने सूर्यं विधुं दृष्ट्वा मुच्यते व्याधिबन्धनात् ॥ २७ ॥

जिसकी दाहिनी भुजा में सफ़ेद सांप काट खावे तो वह थोड़े ही समय में विनीता व प्रियवादिनी भार्या को पाता है २६ जो स्वप्न में सांप से भक्षित हो वह अर्थलाभ को पाताहै और स्वप्न में सूर्य व चन्द्रमा को देखकर व्याधिबन्धन से छूट जाताहै ॥ २७ ॥

वडवां कुक्कुटीं क्रौञ्चीं दृष्ट्वा भार्यां लभेद्ध्रुवम् ।
स्वप्ने यो निगडैर्बद्धः प्रतिष्ठामुत्तमां लभेत् ॥ २८ ॥

ब्राह्मणी या घोड़ी, मुर्गी और कराकुली को देखकर भार्या को निश्चय कर पाता है और जो स्वप्न में बेड़ी हथकड़ी से बाँधा गया हो तो वह उत्तम प्रतिष्ठा को पाताहै ॥२८॥

दध्यन्नं पायसं भुङ्क्ते तडागे वा नदीतटे ।
विशीर्णे पद्मपत्रे च सोपि राजा भविष्यति ॥ २९ ॥
जलौकसं वृश्चिकं च सर्पं च यदि पश्यति ।
धनं पुत्रं च विजयं प्रतिष्ठां च लभेदिति ॥ ३० ॥

जो प्राणी स्वप्न में तालाब या नदी के किनारे फटे केला के पत्ते पर दही, भात और खीर को खाता है वह राजा होता है और यदि स्वप्न में जोंक बीछू और सांप को देखता है तो धन, पुत्र, विजय और प्रतिष्ठा को पाता है ॥ २९ । ३० ॥

शृङ्गिभिर्दंष्ट्रिभिः कोलैर्वानरैः पीडितो यदि ।
निश्चितं च भवेद्राजा धनं च विपुलं लभेत् ॥ ३१ ॥
मत्स्यं मांसं मौक्तिकं च शङ्खचन्दनहीरकम् ।
यस्तु पश्यति स्वप्नान्ते विपुलं धनमालभेत् ॥ ३२ ॥

यदि स्वप्न में सींगवाले, दाढ़वाले, सूअर और वानरों से पीड़ित होता है तो वह निश्चय कर राजा होता हुआ बड़े धन को पाता है और जो प्राणी मछली, मांस, मोती, शङ्ख, चन्दन और हीरा को देखता है तो वह स्वप्नान्त में भारी धनको पाताहै ॥३१।३२॥

सुरां च रुधिरं स्वर्णं भुक्त्वा विष्ठां धनं लभेत् ।
प्रतिमां शिवलिङ्गं च लभेद्दृष्ट्वा जयं धनम् ॥ ३३ ॥
फलितं पुष्पितं बिल्वमाम्रं दृष्ट्वा लभेद्धनम् ।
दृष्ट्वा च जलमग्निं च धनं बुद्धिं श्रियं लभेत् ॥ ३४ ॥

जो प्राणी स्वप्न में मदिरा, रक्त और सोना व विष्ठा को खाता है तो वह धन को पाता है व जो मूर्त्ति व शिवलिङ्ग को देखता है तो वह जय व धनको पाता है और जो फले, फूले बेल व आँब को देखता है तो वह धनको पाता है और जो जल व आगीको देखता है तो वह धन, बुद्धि और लक्ष्मी को पाता है ॥ ३३ । ३४ ॥

आमलकं धात्रीफलमुत्पलं च धनागमम् ।
देवताश्च द्विजा गावः पितरो लिङ्गिनस्तथा ॥ ३५ ॥
यद्ददाति मिथः स्वप्ने तत्तथैव भविष्यति ।
शुक्लाम्बरधरां नारीं शुक्लमाल्यानुलेपनाम् ॥
समाश्लिष्यति यः स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतः सुखम् ॥ ३६ ॥

जो स्वप्न में आमरा, अँवरा, कमल, देवता, ब्राह्मण, गौ, पितर और लिङ्गियों को देखता है तो वह प्राणी धनको पाता है और जो परस्पर देता है वह वैसाही होता है और जो स्वप्न में सफ़ेद वस्त्रों को धारे व सफ़ेद माला पहने व चन्दन को लगाये हुई नारी का आलिङ्गन करता है उसको लक्ष्मी मिलती है व सब कहीं सुख को पाता है ॥ ३५ । ३६ ॥

पीताम्बरधरां नारीं पीतमाल्यानुलेपनाम् ।
उपगूहति यः स्वप्ने कल्याणं तस्य जायते ॥ ३७ ॥

जो स्वप्न में पीतवस्त्र धारे, पीतमाला पहने व पीतचन्दन काही लेपन किये हुई रमणी का आलिङ्गन करता है तो उसको कल्याण होता है ॥ ३७ ॥

सर्वाणि शुक्लानि प्रशंसितानि भस्मास्थिकार्पासविवर्जितानि ।
सर्वाणि कृष्णानि विनिन्दितानि गोहस्तिदेवद्विजवर्जितानि ॥ ३८ ॥

स्वप्न में राख, हड्डी, कपास से रहित सारी सफ़ेद चीज़ें प्रशंसित होती हैं और गऊ, हाथी, देवता और ब्राह्मण से वर्जित सारी काली चीज़ें विशेषता से निन्दित कहाती हैं ॥ ३८ ॥

दिव्या स्त्री संमिता विप्रा रत्नभूषणभूषिता ॥
यस्य मन्दिरमायाति स प्रियं लभते ध्रुवम् ॥ ३९ ॥

स्वप्नमें रत्नभूषणों से भूषित ब्राह्मणी प्रमाणवाली दिव्य रमणी जिस के घर आती है वह प्रियपदार्थ को निश्चयकर पाता है ॥ ३९ ॥

स्वप्ने च ब्राह्मणो देवो ब्राह्मणी देवकन्यका ।
कुमारी चाष्टवर्षीया रत्नभूषणभूषिता ।
यस्य तुष्टा भवेत्स्वप्ने तस्य तुष्टा च पार्वती ॥ ४० ॥

जिसके स्वप्न में ब्राह्मण, देवता, ब्राह्मणी, देवकन्या, कुमारी और रत्नभूषणों से भूषित आठ वर्ष की कन्या संतुष्ट होती है उसके ऊपर पार्वतीजी प्रसन्न होती हैं ॥ ४० ॥

ब्राह्मणो ब्राह्मणी वापि संतुष्टः संमिता सती ।
फलं ददाति यस्मै च तस्य पुत्रो भविष्यति ॥ ४१ ॥
यः स्वप्ने ब्राह्मणो नन्द ! करोति च शुभाशिषम् ।
यद्ददति भवेत्तस्य तस्यैश्वर्यं भवेद्ध्रुवम् ॥ ४२ ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी जोकि साध्वी होकर भलीभांति मानी गई हो वह सन्तुष्ट होकर जिसके लिये फल को देती है उसके पुत्र उपजता है ४१ हे नन्द ! स्वप्न में जो ब्राह्मण शुभाशीर्वाद देता है या जो कहता है वह उस स्वप्नद्रष्टा के होता है और निश्चयकर ऐश्वर्य होता है ॥ ४२ ॥

परितुष्टो द्विजश्रेष्ठश्चायाति यस्य मन्दिरम् ।
नारायणः शिवो ब्रह्मा प्रविशेत्तु तदाश्रमम् ॥ ४३ ॥
सम्पत्तिस्तस्य भवति यशश्च विपुलं शुभम् ।

पदे पदे सुखं तस्य सम्मानं गौरवं लभेत् ॥ ४४ ॥

स्वप्न में जिसके घर सन्तुष्ट होकर श्रेष्ठ ब्राह्मण आता है उसके आश्रम में नारायण, शिव व ब्रह्माजी आते हैं व उसकी सम्पत्ति बढ़ती है और शुभदायक बड़ाभारी यश होता है और पद २ में उसको सुख होता है और वह सम्मान व गौरवता को पाता है ॥ ४३ । ४४ ॥

अकस्मादपि स्वप्ने तु लभते सुरभीं यदि ।
भूमिलाभो भवेत्तस्य भार्या चापि पतिव्रता ॥ ४५ ॥
करेण कृत्वा हस्ती यं मस्तके स्थापयेद्यदि ।
राज्यलाभो भवेत्तस्य निश्चितं च श्रुतौ श्रुतम् ॥ ४६ ॥

यदि स्वप्न में एकाएकी सुरभी गऊ को पाजाता है तो उसे भूमि का लाभ होता है और स्त्री पतिव्रता मिलती है ४५ स्वप्न में हाथी शूंड से पकड कर जिसको माथे पर धरलेता है तो उसको राज्य का लाभ होता है यह निश्चित शास्त्रों में सुनागया है ॥ ४६ ॥

स्वप्ने तु ब्राह्मणश्रेष्ठः समाश्लिष्यति यं नरम् ।
तीर्थस्नायी भवेत्सोपि निश्चितश्च श्रियान्वितः ॥ ४७ ॥

स्वप्न में श्रेष्ठ ब्राह्मण जिस नर को लिपटा लेता है तो वह निश्चयकर लक्ष्मी से संपन्न होता हुआ तीर्थस्नायी होता है ॥ ४७ ॥

स्वप्ने ददाति पुष्पं च यस्मै पुण्यवते द्विजः ।
जययुक्तो भवेत्सोपि यशस्वी च धनी सुखी ॥ ४८ ॥
स्वप्ने दृष्ट्वा च तीर्थानि सौधरत्नगृहाणि च ।
जययुक्तश्च धनवांस्तीर्थस्नायी भवेन्नरः ॥ ४९ ॥

स्वप्न में ब्राह्मण जिस पुण्यवान् के लिये फूल को देता है वह प्राणी जययुक्त होता हुआ यशस्वी, धनी व सुखी होता है ४८ स्वप्न में तीर्थ, राजघर, रत्न और घर को देख कर प्राणी जययुक्त होकर धनवान् होता हुआ तीर्थस्नायी होता है ॥ ४९ ॥

स्वप्ने तु पूर्णकलशं कश्चित्कस्मै ददाति वा ।
पुत्रलाभो भवेत्तस्य संपत्तिं वा समालभेत् ॥ ५० ॥
हस्ते कृत्वा तु कुडवमाढकं वापि सुन्दरीं ।
यस्य मन्दिरमायाति स लक्ष्मीं लभते ध्रुवम् ॥ ५१ ॥

स्वप्न में कोई किसी के लिये पूर्ण कलश को देता है तो उसको पुत्र का लाभ होता है या सम्पत्ति को पाता है ५० हाथ में कुडव या आढ़क को धरकर सुन्दरी रमणी जिस के घर आती है वह लक्ष्मी को निश्चयकर पाता है ॥ ५१ ॥

दिव्या स्त्री यद्गृहं गत्वा पुरीषं विसृजेद्यदा।
अर्थलाभो भवेत्तस्य दारिद्र्यं च प्रयाति च ॥ ५२ ॥
यस्य गेहं समायाति भार्यया सह ब्राह्मणः।
पार्वत्या सह शम्भुर्वा लक्ष्मीनारायणोथवा ॥ ५३ ॥

दिव्य रमणी जिसके घर जाकर विष्ठा का त्याग करती है तो उसको अर्थ का लाभ होता है और दरिद्र चलाजाता है ५२ जिसके घर में ब्राह्मणी समेत ब्राह्मण आजाता है तो उसको पार्वती समेत महादेव या लक्ष्मी समेत नारायणजी मिलते हैं ॥ ५३ ॥

ब्राह्मणो ब्राह्मणी वापि स्वप्ने यस्मै ददाति वा।
धान्यं पुष्पाञ्जलिं वापि तस्य श्रीः सर्वतः सुखी ॥ ५४ ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी स्वप्न में जिसके लिये धान्य व पुष्पाञ्जलि को देती है उसके यहां चारों ओर से लक्ष्मी आती है और वह प्राणी सुखी रहता है ॥ ५४ ॥

मुक्ताहारं पुष्पमाल्यं चन्दनं च सितं तथा।
स्वप्ने ददाति विप्रश्च तस्य श्रीः सर्वतः सुखी ॥ ५५ ॥
गोरोचनां पताकां वा हरिद्रामिक्षुदण्डकम्।
स्निग्धान्नं लभते स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतः सुखी ॥ ५६ ॥

मुक्ताहार, पुष्पमाला और सफ़ेद चन्दन को जो ब्राह्मण स्वप्न में जिसको देता है उसको लक्ष्मी मिलती है और वह सब कहीं सुखी रहता है ५५ गोरोचना, पताका, हरिद्रा, ईखकादण्ड, सिद्धान्न या स्निग्धान्न को जो प्राणी स्वप्न में पाता है तो उसको लक्ष्मी प्राप्त होती है और वह सब कहीं सुखी रहता है ॥ ५६ ॥

ब्राह्मणो ब्राह्मणी वापि ददाति यस्य मस्तके।
छत्रं वा शुक्लधान्यं वा स च राजा भविष्यति ॥ ५७ ॥
स्वप्ने रथस्थः पुरुषः शुक्लमाल्यानुलेपनः।
तत्रस्थो दधि भुङ्क्ते च पायसं वा नृपो भवेत् ॥ ५८ ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी जिसके माथे पर छाता को धरती है या सफ़ेद धान्यको चढ़ाती

है तो वह राजा होता है ५७ स्वप्न में रथ में बैठा पुरुष सफ़ेद माला पहने व चन्दन को लगाये हुए वहां टिकाहुआ दही या खीरको खाता है तो वह राजा होता है ॥ ५८ ॥

स्वप्ने ददाति विप्रश्च ब्राह्मणी वा सुधां दधि ।
प्रशस्तपात्रं यस्मै वा सोपि राजा भवेद्ध्रुवम् ॥ ५९ ॥
ददाति पुस्तकं स्वप्ने यस्मै पुण्यवते द्विजः ।
स भवेद्विश्वविख्यातः कवीन्द्रः पण्डितेश्वरः ॥ ६० ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी स्वप्न में जिसके लिये सुधा, दही और योग्यपात्र को देती है तो वह निश्चय कर राजा होता है ५९ ब्राह्मण स्वप्न में जिस पुण्यवान् के लिये पुस्तक को देता है तो वह विश्व में विख्यात होता हुआ कवीन्द्र होकर पण्डितेश्वर होता है ॥ ६० ॥

यं पाठयति स्वप्ने या मातेव च सुतं यथा ।
सरस्वती सुतः सोपि तत्परो नास्ति पण्डितः ॥ ६१ ॥
ब्राह्मणः पाठयेद्यश्च पितेव यत्नपूर्वकम् ।
ददाति पुस्तकं प्रीत्या स च तत्सदृशो भवेत् ॥ ६२ ॥

स्वप्न में जो माता पुत्र के नाईं जिसको पढ़ाती है वह सरस्वतीसुत होता है और उससे परे पण्डित कोई नहीं होता है ६१ ब्राह्मण पिता के नाईं यत्नपूर्वक जिसको पढ़ाता है और प्रीति से पुस्तक को देता है वह उसके समान होता है ॥ ६२ ॥

प्राप्नोति पुस्तकं स्वप्ने पथि वा यत्र तत्र वा ।
स पण्डितो यशस्वी च विख्यातश्च महीतले ॥ ६३ ॥
स्वप्ने यस्मै महामन्त्रं विप्रो विप्रा ददाति चेत् ।
स भवेत्पुरुषः प्राज्ञो धनवान्गुणवान्सुधीः ॥ ६४ ॥

स्वप्न में जो मनुष्य मार्ग में या जहां तहां पुस्तक को पाजाता है तो वह पण्डित व यशस्वी होकर पृथ्वीमण्डल में विख्यात होता है ६३ स्वप्न में ब्राह्मण या ब्राह्मणी जिसके लिये महामन्त्र को देती है तो वह पुरुष प्राज्ञ, धनवान् व गुणवान् होकर बड़ी बुद्धिवाला होता है ॥ ६४ ॥

स्वप्ने ददादि मन्त्रं वा प्रतिमां वा शिलामयीम् ।
यस्मै ददाति विप्रश्च मन्त्रसिद्धिश्च तद्भवेत् ॥ ६५ ॥

विप्रान्विप्रसमूहं च दृष्ट्वा नत्वाशिषं लभेत् ।
राजेन्द्रः स भवेद्वापि किं वा च कविपण्डितः ॥ ६६ ॥

स्वप्न में ब्राह्मण जिसके लिये मन्त्र या शिलामयी प्रतिमा को देता है तो उसके मन्त्र की सिद्धि होती है ६५ ब्राह्मण या ब्राह्मणसमूहों को देख व नमस्कार कर जो आशीर्वाद को पाता है वह राजेन्द्र होता है अथवा कवियों में पण्डित कहाता है ॥ ६६ ॥

शुक्लधान्ययुतां भूमिं यस्मै विप्रः समुत्सृजेत् ।
स्वप्ने च परितुष्टश्च स भवेत्पृथिवीपतिः ॥ ६७ ॥
स्वप्ने विप्रो रथे कृत्वा नानास्वर्गं प्रदर्शयेत् ।
चिरजीवी भवेदायुर्धनवृद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ६८ ॥

स्वप्नमें ब्राह्मण सफ़ेद धान्य संयुक्त पृथ्वी को जिसके लिये देता है और जो परितुष्ट होता है वह पृथ्वीका स्वामी होता है ६७ स्वप्नमें ब्राह्मण जिसको रथमें करके नानाभांति स्वर्गको देखलाता है वह चिरजीवी होता है व उसकी आयु व धनकी बढ़ती निश्चय कर होती है ॥ ६८ ॥

विप्राविप्रश्च सन्तुष्टो यस्मै कन्यां ददाति च ।
स्वप्ने च स भवेन्नित्यं धनाढ्यो भूपतिः स्वयम् ॥ ६९ ॥
स्वप्ने सरोवरं दृष्ट्वा समुद्रं वा नदीं नदम् ।
शुक्लाहिं शुक्लशैलं च दृष्ट्वा प्रियमवाप्नुयात् ॥ ७० ॥

स्वप्न में ब्राह्मणी व ब्राह्मण जिसके लिये कन्या को देता है वह नित्यही धनशाली होता हुआ आपही राजा होता है ६९ स्वप्न में सरोवर, समुद्र, नदी, नद, सफ़ेद सांप और सफ़ेद पहाड़ को देखकर प्यारे पदार्थ को पाता है ॥ ७० ॥

यः पश्यति मृतं स्वप्ने स भवेच्चिरजीवनः ।
अरोगो रोगिणं दृष्ट्वा सुखिनं च सुखी भवेत् ॥ ७१ ॥
दिव्या स्त्री यं प्रवदति मम स्वामी भवान्भव ।
स्वप्ने दृष्ट्वा च जागर्ति स च राजा भवेद्ध्रुवम् ॥ ७२ ॥

स्वप्न में जो मृतक को देखता है वह चिरजीवी होता है, अरोगी को देखकर अरोगी

और सुखी को देखकर सुखी होता है ७१ स्वप्न में दिव्य रमणी जिससे कहती है कि आप मेरे स्वामी होवें ऐसा देखकर जो जाग पड़ता है तो वह निश्चय कर राजा होता है ॥ ७२ ॥

स्वप्ने च बालिकां दृष्ट्वा लब्ध्वा स्फाटिकमालिकाम् ।
इन्द्रचापं शुक्लघनं स प्रतिष्ठां लभेद्ध्रुवम् ॥ ७३ ॥
स्वप्ने विप्रो वदति यं मम दासो भवेति च ।
हरिदासस्य सद्भक्तिं लब्ध्वा स वैष्णवो भवेत् ॥ ७४ ॥

स्वप्न में बालिका को देखकर व स्फटिक माला को पाकर इन्द्रधनु व सफ़ेद मेघ को देखकर वह निश्चयकर प्रतिष्ठा को पाता है ७३ स्वप्न में ब्राह्मण जिससे कहता है कि तुम मेरे दास होजाओ व हरिदास की जूठन पाकर वह वैष्णव होता है ॥ ७४ ॥

स्वप्ने विप्रो हरिः शम्भुर्ब्राह्मणी कमला शिवा ।
शुक्ला स्त्री वेदमाता वा जाह्नवी वा सरस्वती ॥ ७५ ॥
गोपालिका वेशधरा बालिका राधिका मम ।
बालश्च बालगोपालः स्वप्नविद्भिः प्रकाशितः ॥ ७६ ॥

जिसने स्वप्न में ब्राह्मण को देखा वह विष्णु व महादेव को देखता है व जिसने ब्राह्मणी को देखा वह लक्ष्मी व पार्वती को देखता है व जिसने श्वेताम्बर धारिणी स्त्री का आलोकन किया उसने वेदमाता का दर्शन पाया व जिसने गङ्गाजी को देखा उसने सरस्वती का दर्शन पाया व जिसने गोपालिका वेशधारिका बालिका का अवलोकन किया उसने मेरी राधिका का दर्शन किया व जिसने बालकों को देखा उसने बालगोपालों का दर्शन पाया ऐसा स्वप्नवेत्ताओंने प्रकाशित किया है ॥ ७५ । ७६ ॥

एष ते कथितो नन्द सुस्वप्नः पुण्यहेतुकः ।
श्रोतुमिच्छसि किं वा त्वं किं भूयः कथयामि ते ॥ ७७ ॥

अहो नन्दजी ! यह पुण्यहेतुक भला स्वप्न तुमसे मैंने कहा अब तुम क्या सुनने की इच्छा करते हो ? फिर मैं तुमसे क्या कहूं ॥ ७७ ॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे सुस्वप्नदर्शनम् ॥ १ ॥

अथ दुःस्वप्ना यथा।

नन्द उवाच।

श्रुतं सर्वं महाभाग दुःस्वप्नं कथय प्रभो।
उवाच तञ्च भगवान् श्रूयतामिति तद्वचः॥ १॥

हे महाभाग! मैंने सब सुना हे प्रभो! दुःस्वप्न को कहिये ऐसा उन का वचन सुनकर श्रीभगवान् जी उन से बोले कि सुनिये मैं कहता हूं॥ १॥

स्वप्ने हसति यो हर्षाद्विवाहं यदि पश्यति।
नर्तकं गीतमिष्टं च विपत्तिस्तस्य निश्चितम्॥ २॥

स्वप्न में जो हर्ष से हँसता है और यदि विवाह तथा नाचनेवाले को देखता है या अभिलषित गीत को सुनता है तो उसको निश्चय कर विपत्ति आनकर घेरलेती है॥ २॥

दन्ता यस्य विपीड्यन्ते विचरन्तं च पश्यति।
धनहानिर्भवेत्तस्य पीडा चापि शरीरजा॥ ३॥
अभ्यङ्गितश्च तैलेन यो गच्छेद्दक्षिणां दिशम्।
खरोष्ट्रमहिषारूढो मृत्युस्तस्य न संशयम्॥ ४॥

जिस के दांत विशेषता से पीड़ित होते हैं व विचरते हुए को देखता है तो उसके धन की हानि व शरीर से उपजी हुई पीड़ा होती है ३ जो तैल से अभ्यङ्गित होकर गदहा, ऊंट व भैंसा पर चढ़ा हुआ दक्षिणदिशा को जाता है तो उसकी निस्संशय मौत होजाती है॥ ४॥

स्वप्ने चूर्णं जवापुष्पमशोकं करवीरकम्।
विपत्तिस्तस्य तैलं च लवणं यदि पश्यति॥ ५॥
नग्नां कृष्णां छिन्ननासां शूद्रस्य विधवां तथा।
कपर्दकं तालफलं दृष्ट्वा शोकमवाप्नुयात्॥ ६॥

यदि स्वप्न में चूना, गुड़हल का फूल, अशोक, कनेर, तैल और लवण को देखता है तो उसको विपत्ति होती है ५ नंगी, काली, नकटी शूद्रकी विधवा (रांड) स्त्री कौड़ा और तालफल को देखकर शोक को पाता है॥ ६॥

स्वप्ने रुष्टं ब्राह्मणं च ब्राह्मणीं कोपसंयुताम्।

विपत्तिश्च भवेत्तस्य लक्ष्मीर्याति गृहाद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥
वनपुष्पं रक्तपुष्पं पलाशं च सुपुष्पितम् ।
कार्पासं शुक्लवस्त्रं च दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ ८ ॥

यदि स्वप्न में रुष्ट ब्राह्मण व कोपवती ब्राह्मणी को देखता है तो उसको विपत्ति होती है और उसकी लक्ष्मी घरसे निश्चय कर चली जाती है ७ वनपुष्प, रक्तपुष्प, बहुपुष्पित पलाश, कपास और सफ़ेद वस्त्र को देखकर दुःख को पाता है ॥ ८ ॥

गायन्तीं च हसन्तीं च कृष्णाम्बरधरां स्त्रियम् ।
दृष्ट्वा कृष्णां च विधवां नरो मृत्युमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥
देवता यत्र नृत्यन्ति गायन्ति च हसन्ति च ।
आस्फोटयन्ति धावन्ति तस्य देशो विनश्यति ॥ १० ॥

गाती, हँसती, काले वस्त्र पहने काली विधवा स्त्री को देखकर प्राणी मौत को पाता है ९ जहां देवतागण नाचते, गाते व हँसते हैं और ताल ठोंकते हुए दौड़ते हैं उसके देश का विनाश होजाता है ॥ १० ॥

वान्तं मूत्रं पुरीषं वा वैद्यं रौप्यं सुवर्णकम् ।
प्रत्यक्षमथवा स्वप्ने जीवितं दशमासिकम् ॥ ११ ॥
कृष्णाम्बरधरां नारीं कृष्णमाल्यानुलेपनाम् ।
उपगूहति यः स्वप्ने तस्य मृत्युर्भविष्यति ॥ १२ ॥

वमन, मूत्र, विष्ठा, वैद्य, रूपा और सोना इनको जो प्रत्यक्ष अथवा स्वप्न में देखता है तो वह दश महीना जीता है ११ काले वस्त्र पहने, काली माला धारे व काला अनुलेपन लगाये हुई नारी को जो नर स्वप्न में आलिङ्गन करता है उसकी मौत हो जाती है ॥ १२ ॥

मृतं वत्सं च मुण्डं च मृगस्य च नरस्य वा ।
यः प्राप्नोत्यस्थिमालां च विपत्तिस्तस्य निश्चितम् ॥ १३ ॥
अभ्यङ्गितस्तु हविषा क्षीरेण मधुनापि वा ।
तक्रेणापि गुडेनैव पीडा तस्य विनिश्चितम् ॥ १४ ॥

मरा हुआ बछड़ा, हरिण व मनुष्य का मूंड़ और हड्डियों की माला को जो प्राणी स्वप्न में देखता है उसको निश्चय कर विपत्ति होती है १३ और जो प्राणी स्वप्न में घी, दूध, शहद, मठा और गुड़से अभ्यङ्गित होता है तो उसको निश्चय कर पीड़ा होती है ॥ १४ ॥

रथं खरोष्ट्रसंयुक्तमेकाकी योधिरोहयेत् ।
तत्रस्थोऽपि च जागर्ति मृत्युरेव न संशयः ॥ १५ ॥
रक्ताम्बरधरां नारीं रक्तमाल्यानुलेपनाम् ।
उपगूहति यः स्वप्ने व्याधिस्तस्य विनिश्चितम् ॥ १६ ॥

यदि स्वप्न में अकेला प्राणी गदहा व ऊंटसे जुते हुए रथपर सवार होता है और वहां बैठा हुआ भी जागता रहता है तो उसकी निःसन्देह मौतही होजाती है १५ लाल वस्त्र धारे, लाल माला पहने व लाल चन्दन का ही लेप लगाये हुई रमणी को जो प्राणी स्वप्न में आलिङ्गन करता है उसको निश्चय कर व्याधि होती है ॥ १६ ॥

पतितं नखकेशं च निर्वाणाङ्गारमेव च ।
भस्मपूर्णां चितां दृष्ट्वा लभते मृत्युमेव च ॥ १७ ॥
श्मशानं शुक्लकाष्ठं च तृणानि लोहमेव च ।
मसीं च किञ्चित्कृष्णां वा दृष्ट्वा दुःखं लभेद्ध्रुवम् ॥ १८ ॥

गिरेहुए नख, केश, आगीका अंगार और भस्मपूरित चिताको देखकर प्राणी मौतही को पाता है १७ श्मशान, सफ़ेद काष्ठ, तृण, लोहा या कुछेककाली स्याही को देखकर प्राणी निश्चयकर दुःखको पाता है ॥ १८ ॥

पादुकां फलकं रक्तपुष्पमाल्यं भयानकम् ।
माषं मसूरं मुद्गं वा दृष्ट्वा सद्यो व्रणं लभेत् ॥ १९ ॥
भग्नभाण्डं क्षतं शूद्रं गलत्कुष्ठं च रोगिणम् ।
रक्ताम्बरं च जटिलं शूकरं महिषं तथा ॥ २० ॥
कण्टकं सरलं काकं भल्लूकं वानरं खरम् ।
पूयं गात्रमलं स्वप्ने केवलं व्याधिकारणम् ॥ २१ ॥

खड़ाऊं, ढाल, लालफूलों की माला, भयानक पदार्थ, उड़द, मसूर या मूंग को देख कर शीघ्रही घाव को पाता है १९ फूटे बासन, घायल शूद्र, गलत्कुष्ठवाला रोगी, लालवस्त्रधारी जटिल, सूअर, भैंसा, सीधाकांटा, कौआ, रीछ, वानर, गदहा, पीब और शरीर का मैल इनको स्वप्न में देख कर केवल व्याधि का ही कारण होता है ॥ २० । २१ ॥

अन्धकारं महाघोरं मृतजीवं भयानकम् ।
दृष्ट्वा स्वप्ने योनिलिङ्गं विपत्तिं लभते ध्रुवम् ॥ २२ ॥

स्वप्नमें महाघोर अन्धकार, भयानक मरा हुआ जीव और योनिलिङ्ग को देखकर प्राणी निश्चयकर विपदा को पाता है ॥ २२ ॥

कुवेशरूपं म्लेच्छं च यमदूतं भयंकरम् ।
पाशहस्तं पाशशस्त्रं दृष्ट्वा मृत्युं लभेन्नरः ॥ २३ ॥
ब्राह्मणो ब्राह्मणी बाला बालको वा सुतः सुता ।
विदायं कुरुते कोपाद्दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥

निन्दितवेशरूपधारी म्लेच्छ और भयंकर पाशपाणि व पाशायुधधारी यमदूत को देख कर प्राणी मौतको पाता है २३ ब्राह्मण, ब्राह्मणी, बाला, बालक, पुत्र या पुत्री कोपसे हिस्सा को न बांटतेहुए देखकर दुःख को पाता है ॥ २४ ॥

कृष्णपुष्पं च तन्माल्यं शल्यशस्त्रास्त्रधारिणम् ।
म्लेच्छां च विकृताकारां दृष्ट्वा मृत्युं लभेद्ध्रुवम् ॥ २५ ॥
वाद्यं च नर्तनं गीतं गायनं रक्तवाससम् ।
मृदङ्गवाद्यमानद्धं दृष्ट्वा दुःखं लभेद्ध्रुवम् ॥ २६ ॥

कालाफूल या कालेफूलों की माला शल्य-शस्त्र-अस्त्रधारी और विकृतरूपिणी म्लेच्छा रमणी को देखकर प्राणी मौत को निश्चयकर पाता है २५ बजाना, नाचना, गाना, रक्तवस्त्रधारी गायक, मृदङ्गबाजा और मुरचङ्ग आदि बाजा को देखकर प्राणी निश्चयकर दुःख को पाता है ॥ २६ ॥

मत्स्यादिधारयेद्यो हि तद्भ्रातुर्मरणं ध्रुवम् ।
छिन्नं वापि कबन्धं वा विकृतं मुक्तकेशिनम् ॥ २७ ॥
क्षिप्तं नृत्यं च कुर्वन्तु दृष्ट्वा मृत्युं लभेन्नरः ।
मृतो वापि मृता वापि कृष्णां म्लेच्छां भयानकाम् ॥
उपगूहति यः स्वप्ने तस्य मृत्युर्विनिश्चितः ॥ २८ ॥

स्वप्न में जो प्राणी मत्स्य आदि जीवों को पकड़ता है तो उसके भाई का मरण निश्चय कर होता है कटाहुआ या विना शिरका धड़, बीमार, बालों को छिटकाये, हाथ पैर चलाते और नाचते हुए जन को देखकर प्राणी मौतको पाता है मृतकपुरुष, या मरीहुई काली भयानक म्लेच्छा रमणी को जो स्वप्न में लिपटा लेता है तो उसकी मौत निश्चय कर होती है ॥ २७ । २८ ॥

येषां दन्ताश्च भग्नाश्च केशाश्चापि पतन्ति च ।

धनहानिर्भवेत्तेषां पीडा वा तच्छरीरजा ॥ २९ ॥

स्वप्न में जिनके दांत टूटजाते और बाल गिरपड़ते हैं उनके धन की हानि या उनके शरीर से उपजी हुई पीड़ा होती है ॥ २९ ॥

उपद्रवन्ति यं स्वप्ने शृङ्गिणो दंष्ट्रिणोपि वा ।
बालका मानवाश्चैव तस्य राजकुलाद्भयम् ॥ ३० ॥
छिन्नवृक्षं पतन्तं च शिलावृष्टिं तुषं क्षरम् ।
रक्ताङ्गारं भस्मवृष्टिं दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ ३१ ॥

स्वप्न में सींगवाले या दाढ़वाले, बालक और मानवगण जिससे उपद्रव करते हैं उस को राजकुल से भय होती है ३० गिराहुआ कटावृक्ष, शिलावृष्टि, भूसी, खार, लाल अंगार और भस्मवृष्टि को देख कर दुःख को पाता है ॥ ३१ ॥

गृहं पतन्तं शैलं वा धूमकेतुं भयानकम् ।
भग्नस्कन्धं तरोर्वापि दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ ३२ ॥
रथगेहशैलवृक्षगोहस्तितुरगात्खरात् ।
पतन्ति भूमौ ये स्वप्ने विपत्तिस्तस्य संकुला ॥ ३३ ॥

गिरता हुआ घर, पहाड़, भयानक धूमकेतु और वृक्षका टूटा स्कन्ध इनको स्वप्न में देखकर दुःख को पाता है ३२ स्वप्न में जो प्राणी रथ-घर, पहाड़, वृक्ष, बैल, हाथी, घोड़ा और गदहा से भूमिमें गिरते हैं उनको बड़ीभारी विपत्ति होती है ॥ ३३ ॥

उच्चैः पतन्ति गर्त्तेषु भस्माङ्गारचितासु च ।
क्षारकुण्डेषु चूर्णेषु मृत्युस्तेषां न संशयः ॥ ३४ ॥
बलाद्गृह्णाति दुष्टश्च छत्रं च यस्य मस्तकात् ।
पितुर्नाशो भवेत्तस्य गुरोर्वापि नृपस्य वा ॥ ३५ ॥

गड़हा, भस्म, अँगार, चिता, क्षारकुण्ड और चूना में जो ऊंचे से गिरते हैं उनकी मौत निस्सन्देह होजाती है ३४ जिसके मस्तक से छाता को कोई दुष्ट बलसे लेलेता है तो उसके पिता, गुरु वा राजा का विनाश होता है ॥ ३५ ॥

सुरभी यस्य गेहाच्च याति त्रस्ता सवत्सिका ।
प्रयाति पापिनस्तस्य लक्ष्मीरपि वसुन्धरा ॥ ३६ ॥
पाशेन कृत्वा बन्धं च यं गृहीत्वा प्रयान्ति च ।
यमदूताश्च ये म्लेच्छास्तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ३७ ॥

जिस के घर से बछड़ासमेत डरीहुई सुरभी गऊ चली जाती है उस पापी के घर से लक्ष्मी और वसुन्धरा भी जाती रहती है ३६ स्वप्न में यमराज के दूत जोकि म्लेच्छरूपधारी हैं वे जिस को पकड़ के पाश से बाँधकर लेजाते हैं उसको मौत निस्सन्देह हो जाती है ॥ ३७ ॥

गणको ब्राह्मणो वापि ब्राह्मणी वा गुरुस्तथा ।
परिरुष्टः शपति यं विपत्तिस्तस्य निश्चितम् ॥ ३८ ॥
विरोधिनश्च काकाश्च कुक्कुरा भल्लुकास्तथा ।
पतन्त्यागत्य यद्गात्रे तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ३९ ॥
महिषा भल्लुका उष्ट्राः शूकरा गर्दभास्तथा ।
रुष्टा धावन्ति यं स्वप्ने स रोगी निश्चितं भवेत् ॥ ४० ॥

ज्योतिषी, ब्राह्मण वा ब्राह्मणी तथा गुरुदेव ये स्वप्न में नाराज होकर जिसको शाप देते हैं उसको निश्चयकर विपदा घेरती है ३८ शत्रुगण, कौआ, कूकुर तथा रीछ ये आकर जिसके अङ्गपर गिरते हैं उसकी निस्सन्देह मौत होजाती है ३९ भैंसा, भल्लूक, ऊंट, सूअर और गदहा ये स्वप्नमें नाराज होकर जिसके ऊपर दौड़ते हैं वह निश्चयकर रोगी होजाता है ॥ ४० ॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे दुस्स्वप्नदर्शनम् ॥ २ ॥

अथ मृत्युचिह्नसामुद्रिकमाह ।

उत्तराभिमुखस्थो यो यदि गच्छति दक्षिणम् ।
दिङ्मूढः स तदा ज्ञेयः सप्तमासान्न जीवति ॥ १ ॥

जो प्राणी उत्तरदिशा के सामने टिका हुआ यदि दक्षिणदिशा को जाता है तो उसे दिङ्मूढ जानना चाहिये वह सात महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ १ ॥

शुद्धनिर्मलमादित्ये विवरं यदि पश्यति ।
तद्वर्षान्ते क्षयं याति नान्यथा भैरवोदितः ॥ २ ॥

यदि कोई प्राणी सूर्यमण्डल में निर्मल विवर (गड़हा) को देखता है तो वह वर्षान्त में क्षयको प्राप्त होता है अन्यथा नहीं होसक्ता ऐसा भैरवने कहा है ॥ २ ॥

सितं कृष्णं हरिद्राभं समूलं भानुमण्डलम् ।
यदि पश्यति सदा सो वै वर्षादर्धं न जीवति ॥ ३ ॥

यदि कोई प्राणी मूलसमेत सूर्यमण्डलको सफेद, काला और हल्दीसमान वर्णवाला सदैव देखता है वह छः महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ३ ॥

रविबिम्बे जले दृष्टे संपूर्णे न मृतिः क्वचित् ।
खण्डे दिक्षु क्रमान्मृत्युरेकद्वित्रिषु मासतः ॥
मध्यच्छिद्रे दशाहेन तज्जले धूमसङ्कुले ॥ ४ ॥

जब जलमें सूर्यका मण्डल पूरा देख पड़ता है तो कभी मौत नहीं होती है व दिशाओं में खण्ड क्रमसे एक मास, दो मास व तीन मास में मौत होती है और यदि धूमसंकुलित उस जल में सूर्य के मण्डल में मध्यवर्ती छेद देखा जाता है तो दश दिवस में मौत होती है ॥ ४ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवं सोमं छायायां वा महापथम् ।
यो न पश्यति निस्तेजो वर्षान्ते म्रियते ध्रुवम् ॥ ५ ॥

अरुन्धती, ध्रुव, सोम वा छाया में निस्तेज महापथ को जो नहीं देखता है वह वर्षान्त में निश्चयकर मर जाता है ॥ ५ ॥

सच्छिद्रो दृश्यते चन्द्रस्तद्वद्वा दर्पणे रविः ।
दृश्यते निस्पृहो वापि यस्यासौ म्रियतेऽब्दतः ॥ ६ ॥

जो प्राणी दर्पण (शीशा) में चन्द्रमा और सूर्य को छेदसमेत देखता है या निस्पृह देखा जाता है तो वह वर्ष के भीतरही मर जाता है ॥ ६ ॥

संपूर्णो वहते सूर्यो यस्य सोमो न दृश्यते ।
वर्षान्ते जायते मृत्युः कालज्ञानं शिवोदितम् ॥ ७ ॥

जिसकी सूर्यनाड़ी (इड़ा) पूर्ण बहती हो और चन्द्रनाड़ी (पिङ्गला) नहीं देख पड़ती हो तो उसकी वर्षान्त में मौत होती है यह कालज्ञान श्रीशिवजीने कहा है ॥ ७ ॥

यस्य वा स्नानमात्रेण हृदयं यदि शुष्यति ।
धूमो वा दर्शने यस्य सप्तमासान्तजीवनम् ॥ ८ ॥

जिसके स्नानमात्रसे यदि हृदय सूखजाता है या जिसके दर्शन में धुआं देख पड़ता है उसकी सातमहीना के बीचमें ही मौत होती है ॥ ८ ॥

अग्रतः पृष्ठतो वापि यस्य स्यात्खण्डितं पदम् ।
कर्दमेपांशुपुञ्जे वा सप्तमासान्तजीवनम् ॥ ९ ॥

आगे या पीछे जिसका पैर कीचड़ या धूलिसमूह में खण्डित भासता हो उसकी सात महीना के भीतरही मौत होजाती है ॥ ९ ॥

कृष्णरक्तानि वस्त्राणि रक्तमाल्यानुलेपनम् ।
स्वप्ने यो लभतेऽकस्मात्षण्मासान्ते न जीवति ॥ १० ॥

जो प्राणी एकाएकी स्वप्नमें काले व लालकपड़े लालमाला व लालचन्दनकाही अनुलेपन पाजाता है तो वह प्राणी छः महीनाके भीतर नहीं जीता है ॥ १० ॥

भक्तिः शीलं स्मृतिस्त्यागो बुद्धिर्बलमहेतुकम् ।
यस्यैतानि निवर्तन्ते षण्मासान्तं न जीवति ॥ ११ ॥

भक्ति (प्रेम) शील (स्वभाव) स्मरण शक्ति, त्याग, बुद्धि और बल ये जिसके अकारण बदल जाते हैं तो वह छः मासके भीतर नहीं जीता है ॥ ११ ॥

राक्षसैर्भूतवेतालैः श्वानशूकरगर्दभैः ।
गृध्रैः काकैरुलूकैश्च महिषैर्वा क्रमेलकैः ॥
स्वप्ने वेष्टितमात्मानं पश्येदब्दान्न जीवति ॥ १२ ॥

जो स्वप्न में राक्षस, भूत, वेताल, कुत्ता, सूअर, गदहा, गीध, कौआ, उल्लू, भैंसा और ऊंट इन्होंसे घेरा हुआ अपनाको देखता है तो वह प्राणी साल के भीतर नहीं जीता है ॥ १२ ॥

आसोरस्कां यदा पश्येदात्मच्छायामथापि वा ।
सुकृष्णास्तारकाः पश्येत्षण्मासान्ते न जीवति ॥ १३ ॥

जो अपनी छाया को वक्षस्थल पर्यन्त देखता है अथवा आकाश में तारागणों को काले वर्णवाला देखता है तो वह प्राणी छः महीना के भीतर नहीं जीता है ॥ १३ ॥

निशि चापं दिवा चोल्काममेघे निशि दर्शनम् ।
यः पश्येन्म्रियते सोपि षण्मासाच्छङ्करोदितम् ॥ १४ ॥

जो रात्रिमें इन्द्रधनु व दिन में उल्का व मेघरहित समयमें रात्रिका दर्शन करता है वह भी प्राणी छः महीनामें मरजाता है ऐसा शंकरने कहा है ॥ १४ ॥

शङ्खावर्ते भ्रुवोर्मध्ये गुल्फयोर्मर्मसन्धिषु ।
स्यन्दनं यस्य नैवास्ति मासादूर्ध्वं न जीवति ॥ १५ ॥

ललाट, भौंह का विचला भाग, गण्डा और मर्मसन्धियां इन्होंमें जिसके पसीना नहीं आता है वह महीना से ऊपर नहीं जीता है ॥ १५ ॥

चक्षुषी स्रवतो नित्यं न शृणोत्यपि निश्चितम् ।
दीपगन्धं न जानाति पक्षादूर्ध्वं न जीवति ॥ १६ ॥

जिसके दोनों नेत्र निरन्तर बहा करते हों व जो निश्चयकर सुनता न हो और दीप की गन्ध को भी न जानता हो तो वह प्राणी पक्ष से अधिक नहीं जीता है ॥ १६ ॥

ओष्ठयोर्धूसरत्वं च शुष्कं वा तालुदेशकम् ।
स्कन्धौ च भग्नमायान्तौ षण्मासान्ते न जीवति ॥ १७ ॥

जिसके दोनों ओठ धूसरवर्ण से हो गये हों व तालू सूखगया हो और दोनों कन्धे टूटेसे विदित होते हों तो वह प्राणी छः महीना के बीच में नहीं जीता है ॥ १७ ॥

भुञ्जतो यस्य वा नित्यं यूका वा मक्षिकादयः ।
त्यजतो वाथ वैरस्यं षण्मासान्ते न जीवति ॥ १८ ॥

जो जुआं या मक्खी आदिकों को सदैव खाता या विरसता को त्यागता है तो वह प्राणी छः महीना के भीतर नहीं जीता है ॥ १८ ॥

अहोरात्रद्वयं यस्य पिङ्गलायां सदागतिः ।
तस्य वर्षद्वयं ज्ञेयं जीवितं तत्त्ववेदिभिः ॥ १९ ॥

जिसका पवन दो दिन पिङ्गला (चन्द्रनाड़ी) में बहता रहे तो उसका जीवन दो वर्ष का तत्त्ववेदियों को जानना चाहिये ॥ १९ ॥

त्रिरात्रं वहते यस्य वायुरेकपुटे स्थितः ।
वत्सरं यावदायुःस्यात्प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ २० ॥

जिसका वायु एक नासापुट में टिका हुआ तीनरात बराबर बहता रहे तो उसका जीवन एक वर्ष का पण्डितों ने कहा है ॥ २० ॥

रात्रौ चन्द्रो दिवा सूर्यो वहेद्यस्य निरन्तरम् ।
तस्य मृत्युं विजानीयात्षण्मासाभ्यन्तरे सुधीः ॥ २१ ॥

जिसकी चन्द्रनाड़ी रात्रि में और दिन में सूर्यनाड़ी निरन्तर बहती रहे तो उसकी मौत छः महीना के भीतर पण्डितों को जानना चाहिये ॥ २१ ॥

एकादिषोडशाहानि यदि भानुर्निरन्तरम् ।

वहेद्यस्य च वै मृत्युः शेषाहेन च मासिकैः ॥ २२ ॥

जिसकी सूर्यनाड़ी पक्ष, मास, वर्ष के पहले दिन से लेकर सोलह दिन पर्यन्त बराबर बहती रहे तो उस प्राणी की मृत्यु महीना के शेषदिन में कहना चाहिये ॥ २२ ॥

संपूर्णं वहते सूर्यश्चन्द्रमा नैव दृश्यते ।
पक्षेण जायते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥ २३ ॥

वर्ष-मास व पक्ष के पहले दिन में जिसके दक्षिण नासापुटकी वायु लगातार बहती रहे एवं वामनासापुटकी पवन नहीं चलती देखी जावे तो उस प्राणी की पक्ष भर में मृत्यु होजाती है ऐसा स्वरज्ञानी योगियों ने कहा है ॥ २३ ॥

संपूर्णं वहते चन्द्रः सूर्यो नैव च दृश्यते ।
मासेन दृश्यते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥ २४ ॥

वर्ष-मास व पक्ष के पहले दिन में जिसकी चन्द्रनाड़ी यानी वाम नासापुटकी श्वास निरन्तर बहती रहे और दक्षिण नासापुटकी पवन नहीं बहती देखी जावे तो उस प्राणी की मास भर में मौत होजाती है ऐसा कालज्ञानी योगी ने कहा है ॥ २४ ॥

मूत्रं पुरीषं वायुश्च समकालं प्रजायते ।
तदासौ चलितो ज्ञेयो दशाहे म्रियते ध्रुवम् ॥ २५ ॥

जिसके एक काल में ही मूत्र-मल और अधोवायु निकलते हैं तो उसको चलित जानना चाहिये और वह प्राणी दश दिवस के बीच में निश्चयकर मरजाता है ॥ २५ ॥

एवं चन्द्रप्रवाहश्च सुखलाभो जयस्तथा ।
सूर्यचन्द्रप्रणाशे तु सद्यो मृत्युर्न संशयः ॥ २६ ॥

इस प्रकार चन्द्रप्रवाह चलता रहे यानी इड़ानाड़ी से पवन समकाल में बहता रहे तो सुखका लाभ और जय होता है और जिसका दक्षिण नासापुट व वामनासापुट का पवन एकबारही बन्द होजावे तो शीघ्रही उस प्राणी की मौत निस्सन्देह होजाती है ॥ २६ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवञ्चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आयुर्हीना न पश्यन्ति चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥ २७ ॥

अरुन्धती, ध्रुव, विष्णुपदत्रय और चौथे मातृमण्डल को आयुहीनलोग नहीं देखते हैं ॥ २७ ॥

अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमुच्यते ।
भ्रुवोर्मध्यो विष्णुपदं तारकं मातृमण्डलम् ॥ २८ ॥

जिह्वा 'अरुन्धती' होती है, नासिका का अग्रभाग 'ध्रुव' कहाता है, भौंहों का विचला भाग विष्णुपद और चक्षुस्ताराको मातृमण्डल कहते हैं ॥ २८ ॥

नव ध्रुवः सप्तमो वा पञ्चतारा त्रिनासिका ।
जिह्वामेकदिनं प्रोक्तं म्रियते मानवो ध्रुवम् ॥ २९ ॥

जो भौंहों का मध्यभाग नहीं देखता है तो वह प्राणी उसी दिन से नव या सात दिवस में मरजाता है जो चक्षुताराको नहीं देखता है तो वह पांच दिन में, जो नासाका अग्र भाग नहीं देखता है वह तीन दिन में और जो जिह्वा को नहीं देखता है तो वह प्राणी एकही दिनमें निश्चयकर मर जाता है ॥ २९ ॥

कोणमक्ष्णोङ्गुलीभ्यान्तु किञ्चित्पीडां निरीक्षयेत् ।
यदा न दृश्यते बिन्दुर्दशाहेन जनो मृतः ॥ ३० ॥

आंखों के कोण को अँगुलियों से कुछेक पीड़ित कर देखे यदि बिन्दु नहीं देखा जाता हो तो वह प्राणी दश दिवस के भीतरही मर जाता है ॥ ३० ॥

याम्ये नासापुटे वायुर्यस्य वाति दिवानिशम् ।
अखण्डं तस्य चैवायुः क्षयेदह्नत्रयेण हि ॥ ३१ ॥

जिसके दक्षिणनासापुट में वायु दिन रात बहता हो तो उसकी अखण्डित आयुर्दाय तीन दिन में क्षीण हो जाती है ॥ ३१ ॥

द्व्यहोरात्रं त्र्यहोरात्रं वायुर्वहति सन्ततम् ।
सार्धैकमासं तस्येह जीवितं खलु चोच्यते ॥ ३२ ॥

दो दिन व दो रात किंवा तीन दिन व तीन रात पर्यन्त जिसका वायु निरन्तर बहता रहे तो उसका जीवन डेढ़ महीना पर्यन्त रहता है ॥ ३२ ॥

बहिर्नासापुटे युग्मे दशाहनि निरन्तरम् ।
वायुश्चेत्सहसंक्रान्तः स जीवति दिनद्वयम् ॥ ३३ ॥

जिसका श्वासा दोनों नासापुट में दश दिन पर्यन्त लगातार बहता रहे तो वह प्राणी दो दिन तक जीता रहता है ॥ ३३ ॥

नासावर्त्मद्वयं हित्वा यस्य वायुर्मुखाद्व्रजेत् ।
स चेद्दिनद्वयं स्थित्वा ततो यमपुरं व्रजेत् ॥ ३४ ॥

---

१ रन्ध्रयुग्मम् ॥

जिसका श्वास दोनों नासारन्ध्रों को छोड़कर केवल मुखसेही चलता रहे तो वह प्राणी दो दिन टिककर यमालय को जाता है ॥ ३४ ॥

अकस्माद्वीक्षते यस्तु पुरुषं कृष्णपिङ्गलम् ।
तस्मिन्नेव क्षणे रूपं स जीवेद्वत्सरद्वयम् ॥ ३५ ॥

जो प्राणी एकाएकी पुरुषको काले पीले वर्णवाला देखता है एवं उसी क्षण में रूपान्तर को निहारता है तो वह दो वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ ३५ ॥

यत्र वीर्यं मलं मूत्रं क्षुतं नूनमनन्तरम् ।
इत्येकदा भवेद्वापि अब्दमायुश्च नश्यति ॥ ३६ ॥

जिसके एकही समय में बीज, मल, मूत्र और छींक ये होते हैं उसकी एक वर्ष की आयु शेष रहजाती है यानी वह प्राणी एक साल भर के बाद नहीं जीता है ॥ ३६ ॥

इन्द्रनीलनिभं व्योम्नि नाकं धूम्रं समीक्षते ।
इतस्ततः प्रसृमरं षण्मासं च स जीवति ॥ ३७ ॥

जो प्राणी आकाश में इन्द्रनीलमणि के समान वर्ण को देखता है या धुमैले इधर उधर घूमते हुए आकाश को ही निहारता है तो वह छः मास पर्यन्त जीता है ॥ ३७ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवञ्चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आसन्नमृत्युर्न पश्येच्चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥ ३८ ॥

जिसकी मृत्यु निकटवर्ती होती है तो वह प्राणी अरुन्धती, ध्रुव, विष्णुपदत्रय और चौथे मातृमण्डल को नहीं देखता है ॥ ३८ ॥

भाद्रेह्नि[2]वारे सूर्यस्य पुष्टीकृत्य दिवाकरम् ।
प्रकृत्याप्सु न तम्पश्येत्षण्मासेन स मृत्युभाक् ॥ ३९ ॥

भाद्रमास इतवार के दिवस दिवाकर को पुष्टकर प्रकृति से जल में उनको न देख पावे तो वह छः महीना के बीच में मरजाता है ॥ ३९ ॥

वेत्ति[3] नीरादिवस्त्वन्यत्कटुम्लादिरसस्य च ।
अकस्मादन्यथाभावं षण्मासेन स मृत्युभाक् ॥ ४० ॥

जो प्राणी जलका स्वाद नहीं पाता हो एवं कड़ुवे व खट्टे आदि अन्यान्य वस्तुओं का स्वाद विपरीत जानता हो तो वह छः महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ४० ॥

---

१ पश्यति २ रविवारे ३ जानाति ॥

षण्मासमृत्युलोकस्य कण्ठौष्ठरसना यदा ।
शुष्यन्ति सततं तस्य नरस्य तालुपञ्चमाः ॥ ४१ ॥

जिसके कण्ठ, ओठ, जीभ और तालु ये सदैव सूखते रहते हों तो वह छः मास के मध्य में मृत्युके लोक को जाता है ॥ ४१ ॥

रेतःकवचनेत्रान्ता मलिनानि भवन्ति वै ।
स एव यामनगरं[1] षष्ठे मासि व्रजेन्नरः ॥ ४२ ॥

जिसके वीर्य, वक्षस्थल और नेत्रों के किनारे ये मैलेसे भासते हों तो वह प्राणी छः महीना में यमपुर को जाता है ॥ ४२ ॥

द्रुतमारुह्य शकटं[2] त्रिवर्गं यस्य मस्तकम् ।
ध्रुवं प्रयाति तस्यायुः षण्मासात्परिसंक्षयम् ॥ ४३ ॥

गाड़े पर जल्द चढ़कर जिसका माथा घूमजावे तो उस प्राणी की आयुर्दाय छः महीना के भीतरही निश्चयकर क्षीणता को प्राप्त होती है ॥ ४३ ॥

सुस्नातस्यापि यस्याशु[3] हृदयं परिशुष्यति ।
चरणौ च करौ वापि त्रिमासं तस्य जीवितम् ॥ ४४ ॥

भलीभांति नहाये हुए जिस प्राणी का हृदय जल्द सूखजाता हो और दोनों पैर व हाथ भी शीघ्रही सूखजाते हों तो उसका जीवन तीनमास पर्यन्त रहता है यानी वह प्राणी तीन महीना में ही मरजाता है ॥ ४४ ॥

पृथिवीद्विभवेद्यस्य पादं खण्डपदाकृतिः ।
पार्श्वे च कुण्डलं वापि पञ्चमासान्स जीवति ॥ ४५ ॥

जो प्राणी स्वप्नमें या अचानकही पृथिवी के दो खण्ड व खण्डितपदाकृति और पार्श्वों में कुण्डलाकृति को निहारता है तो वह पांच महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ४५ ॥

देहः प्रकम्पते यस्य देहबन्धोऽपि निश्चलः ।
कृतान्तदूता बध्नन्ति चतुर्थे मासि निश्चितम् ॥ ४६ ॥

जिसकी देह बहुतही कांपती हो और देहका बन्धनभी निश्चल (अकड़तासा) भासता हो तो उस प्राणी को चौथे महीना में यमदूत निश्चयकर बांधते हैं ॥ ४६ ॥

निजस्य प्रतिबिम्बस्य निश्चलेषूदकेषु च ।
उत्तमाङ्गं न पश्येद्यः षण्मासेन विनश्यति ॥ ४७ ॥

---

१ यमपुरं २ क्लीबेऽनः शकटोऽस्त्री स्यादित्यमरः ३ शीघ्रम् ॥

जो प्राणी निश्चल जलों में अपनी छाया (परछाहीं) को शीश विना देखता है तो वह छः महीना के भीतरही मरजाता है ॥ ४७ ॥

मतिर्भ्रश्येत्स्थले वापि धनुरैन्द्रं न पश्यति ।
चन्द्रस्य मण्डलं यस्तु रात्रौ व्योम्नि दिवावसु ॥ ४८ ॥
युगपच्च चतुर्दिक्षु शक्रकोदण्डमण्डलम् ।
भूधरो भूधराग्रो वा गन्धर्वनगरालयम् ॥
दिवा निशा च नृत्यञ्च एते पञ्चत्वहेतवः ॥ ४९ ॥

जिसका स्थल में मतिभ्रम हो जावे और जो इन्द्रधन्वा को न देखता हो व रात्रि के समय आकाश में चन्द्रमण्डल को न निहारता हो और दिन में आकाश को नक्षत्रपूर्ण देखता हो और एकही समय चारों दिशाओं में इन्द्र का चापमण्डल और पर्वत पर्वताग्र, गन्धर्वनगरालय और दिन रात में नाच का दर्शन करता हो तो वह प्राणी शीघ्रही मरजाता है ॥ ४८ । ४९ ॥

करावरुद्धश्रवणः संशृणोति न च ध्वनिम् ।
स्थूलः कृशः कृशस्स्थूलस्तदा मासान्न वर्तते ॥ ५० ॥

जो प्राणी हाथों से कानों को दवाता हुआ शब्द को नहीं सुनता है और जिसको मोटा दुवला व दुवला मोटासा भासता हो तो वह प्राणी महीना से अधिक नहीं बचता है ॥ ५० ॥

यः पश्येदात्मनश्छायां दक्षिणाशासमाश्रिताम् ।
दिनानि पञ्च जीवित्वा पञ्चत्वमुपयाति सः ॥ ५१ ॥

जो प्राणी दक्षिण दिशामें टिकीहुई अपनी छाया को नहीं देखता है वह पांच दिवस जीवित रहकर मरजाता है ॥ ५१ ॥

प्रेक्ष्यते भक्ष्यते यस्तु पिशाचासुरराक्षसैः ।
भूतैः प्रेतैः श्वभिर्गृध्रैर्गोमायुमृगसूकरैः ॥ ५२ ॥
शरभैः शलभैः श्येनैर्वायसैरपि कोरकैः ।
स्वप्ने संजीवितं दृष्ट्वा वर्षान्ते यममीक्षते ॥ ५३ ॥

स्वप्न में जिस प्राणी को पिशाच, असुर, राक्षस, भूत, प्रेत, कुत्ते, गीध, सियार, मृग, सूअर, शरभ (मृगभेद) पतङ्ग, बाज, कौआ और चकोर ये देखते या खाये लेते हैं तो

छह साल भरके बाद यमराज को देखता है अथवा स्वप्न में पिशाचादिकों को जीवित देखता है तो वह वर्षान्त में मर जाता है ॥ ५२ । ५३ ॥

गन्धपुष्पांशुकैः श्येनैः स्वां तनुं भूषितां नरः ।
यः पश्येत्स्वप्नसमये त्वष्टौ मासान्न जीवति ॥ ५४ ॥

जो प्राणी स्वप्न के समय चन्दन, फूल और सफ़ेद वस्त्रों से भूषित अपने शरीर को देखता है वह आठ महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ५४ ॥

पांशुराशिञ्च वल्मीकं यूपं दण्डमथापि च ।
योऽधिरोहति वै स्वप्ने सोष्टमासात्प्रणश्यति ॥ ५५ ॥

जो प्राणी स्वप्न में धूलिराशि, ब्यमौर, यूपकाष्ठ और दण्ड पै चढ़ता है वह आठ महीना के भीतर ही मरजाता है ॥ ५५ ॥

रासभारूढमात्मानं तैलाभ्यक्तञ्च मण्डितम् ।
यमालये नीयमानः स्वप्ने पश्येत्स पूर्वजान् ॥ ५६ ॥

जो प्राणी स्वप्न में गदहे पर चढ़े व तैल से भूषित अपना को निहारता है तथा पूर्वज लोगों को देखता है तो वह शीघ्रही यमालय को पहुँचाया जाता है ॥ ५६ ॥

स्वमौलौ स्वतनौ वापि यः पश्येत्स्वप्नगोचरः ।
तृणानि शुष्ककाष्ठानि षष्ठे मासि न जीवति ॥ ५७ ॥

जो प्राणी स्वप्न में अपने शीश या अपने शरीर के ऊपर तृण या सूखे काठोंको देखता है तो वह छह महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ५७ ॥

लोहदण्डधरं कृष्णपूरुषं कृष्णवाससम् ।
स्वयं योऽग्रे स्थितं पश्येत्त्रिमासान्नात्र संशयः ॥ ५८ ॥

जो प्राणी स्वप्न में लोहदण्डधारी व काले वस्त्र पहने हुए काले पुरुष को आगे खड़ा हुआ आपही देखता है तो वह निस्सन्देह तीन महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ५८ ॥

कालीं कुमारीं यः स्वप्ने बध्नीयाद्बाहुपाशकैः ।
षण्मासेन च वीक्षेत नगरीं शमनाश्रयाम् ॥ ५९ ॥

जो प्राणी स्वप्नमें काली कुमारी को बाहुरूप पाशों से बांधलेता है तो वह छह महीना के भीतरही यमपुरी को देखता है ॥ ५९ ॥

अरश्मिबिम्बं सूर्यञ्च वह्निं चैवांशुमालिनम् ।
दृष्ट्वैकादशमासाच्च न चोर्ध्वं स तु जीवति ॥ ६० ॥

जो प्राणी स्वप्नमें सूर्यको किरणरहितमण्डलवाला व अग्निको अंशुमाली देखता है तो वह प्राणी ग्यारहमाससे ऊपर नहीं जीता है ॥ ६० ॥

हन्यते काकपङ्क्तीभिः पांशुर्वर्षति वामतः ।
स्वच्छायामन्यथा दृष्ट्वा चतुःपञ्च स जीवति ॥ ६१ ॥

जो प्राणी स्वप्न में काकगणों से ठुनकाया जाता है व जिसके वामभाग में धूरि वर्षती हो और जो अपनी छाया को अन्यथा देखता हो तो वह चार या पांच मास पर्यन्त जीता है ॥ ६१ ॥

घृतैस्तैलैस्तथादर्शैस्तोयेन तनुमात्मनः ।
यश्च पश्येदशिरस्कां मासाच्चोर्ध्वं न जीवति ॥ ६२ ॥

जो प्राणी स्वप्न में घी, तैल, शीशा और जल के द्वारा अपनी काया को शीश विना निहारता है तो वह एक मास से अधिक नहीं जीता है ॥ ६२ ॥

यस्य नित्यं शवगन्धो गात्रवसनयोरपि ।
तस्यार्धं मासिकं ज्ञेयं योगी चापि न जीवति ॥ ६३ ॥

जिस प्राणी के शरीर व वस्त्रों में सदा मुरदे कीसी गन्ध आती हो तो उसका जीवन अर्धमासपर्यन्त जानना चाहिये और यदि योगी हो तो भी नहीं जीता है ॥ ६३ ॥

यस्य वै स्नानमात्रन्तु कपालं चाशु शुष्यति ।
पीतं चापि जलं पश्येद्दशाहं तस्य जीवनम् ॥ ६४ ॥

स्नानमात्र से जिस प्राणी का कपाल (मत्था) शीघ्र सूख जाता हो और पिये हुए पानी को देखता हो यानी पानी पीचुका हो प्यास न बुझाती हो बारम्बार पीता हो तो उसका जीना दश दिवसपर्यन्त रहता है ॥ ६४ ॥

ऋक्षवानरयानस्थो यो गच्छेद्दक्षिणां दिशम् ।
स्वप्ने पश्यति तस्यापि मृत्युरेव न संशयः ॥ ६५ ॥

जो प्राणी स्वप्न में रीछ व वानर की सवारी पै चढ़ा दक्षिण दिशा को जाते हुए अपना को देखता है तो उस की निस्सन्देह मौत ही होजाती है ॥ ६५ ॥

रक्तकृष्णाम्बरधरा गायन्ति वा हसन्ति च ।
दक्षिणाशां नयेद्वापि स्वप्ने सोपि न जीवति ॥ ६६ ॥

स्वप्न में लाले व काले कपड़े पहने हुई कामिनियां जिस प्राणी को गाती या हँसती हैं या कि दक्षिण दिशा को ले जाती हैं तो भी वह नहीं जीता है ॥ ६६ ॥

आम्रमस्तकमूलाद्वा निमग्नं पङ्कसागरे ।
स्वप्ने पश्येत्तदा यस्तु स सद्यो म्रियते नरः ॥ ६७ ॥

जो प्राणी स्वप्न में आम्रवृक्ष की फुनगी या जड़ से कीचड़ के सागर में गिरे हुए अपना को देखता है वह शीघ्रही मर जाता है ॥ ६७ ॥

केशाङ्गारचिताभस्मभुजगानजलां नदीम् ।
दृष्ट्वा स्वप्ने दशाहे वा मृत्युरेकादशे दिने ॥ ६८ ॥

जो प्राणी स्वप्न में केश, अंगार, चिताभस्म, सांप और निर्जल नदी को निहारता है तो उसकी दश दिन या ग्यारह दिन में ही मौत होजाती है ॥ ६८ ॥

सूर्योदये शिवा यस्य क्रोशन्याति च सम्मुखम् ।
विपरीतं पुरीषं वा सद्यो मृत्युं स गच्छति ॥ ६९ ॥

सूर्योदय के समय सियार जिसके सामने फेकरता हुआ चला जाता है एवं जिसके मल बहुत सा निकलता है तो वह प्राणी शीघ्र ही मृत्यु को पाता है ॥ ६९ ॥

यस्य वै भुक्तमात्रन्तु हृदयं बाध्यते क्षुधा ।
जायन्ते दन्तहर्षाश्च[1] स गतायुर्न संशयः ॥ ७० ॥

भोजन करचुक ने पर भी जिसका हृदय भूख से व्याकुल बना रहता हो और दन्तहर्ष होते हों तो वह निस्सन्देह मरजाता है ॥ ७० ॥

शक्रायुधं चार्धरात्रे चन्द्रस्य ग्रहणं दिवा ।
दृष्ट्वा तेन च संक्षीणजीवितं नात्र संशयः ॥ ७१ ॥

जो प्राणी अर्धरात्र के समय इन्द्रधन्वा और दिन में चन्द्रग्रहण को देखता है तो उस प्राणी का जीवन जल्द क्षीण होजाता है इसमें संशय नहीं है ॥ ७१ ॥

नासिका वक्रतामेति कर्णौ नयनकौ तथा ।
नेत्रे बाष्पं सरेद्यस्य स गच्छेद्यमसादनम् ॥ ७२ ॥

जिस प्राणी की नाक टेढ़ी होजावे तथा कान व नेत्र टेढ़े होजावें और जिसके नेत्रों में धुआंसा निकलता होवे तो वह प्राणी यमालय को जाता है ॥ ७२ ॥

इति मृत्युसूचकस्वप्नाध्यायः ॥

---

१ शीतरूक्षप्रवाताम्लस्पर्शानामसहा द्विजाः । यत्र स्युर्वातपित्ताभ्यां दन्तहर्षः स कीर्तितः ॥ (इति भावप्रकाशः) ॥

अथ शारीरकाध्यायो व्याख्यायते ।

तर्क्ष्य उवाच ।

कथमुत्पद्यते जन्तुर्भूतग्रामे चतुर्विधे ।
त्वचा रक्तं तथा मांसं मेदो मज्जास्थिजीवनम् ॥ १ ॥

गरुड़जी बोले कि अहो भगवन् ! चार प्रकार वाले प्राणिसमूहों में प्राणी कैसे उपजता है ? तथा खाल, रुधिर, मांस, मेदा, मज्जा, हाड़ और जीवन ये किस भांति उपजते हैं ॥ १ ॥

पादौ पाणी गुदं जिह्वा दन्ताः केशा नखानि च ।
सन्धिमार्गा ह्यनेकाश्च रेखानेकविधास्तथा ॥ २ ॥

पांव, हाथ, गुदा, जिह्वा, दांत, केश, नख और अनेक सन्धिमार्ग तथा अनेक प्रकार की रेखायें किस भांति उपजती हैं ॥ २ ॥

कामः क्रोधो भयं लज्जा मनोहर्षः शुभाशुभम् ।
विचित्रं छिद्रितं चापि नाडीजालेन वेष्टितम् ॥ ३ ॥

काम, क्रोध, भय, लज्जा, मनोहर्ष और नाड़ीजाल से वेष्टित विचित्र छिद्र किस भांति उपजते हैं ॥ ३ ॥

इन्द्रजालमिदं[1] मन्ये संसारेऽसारसागरे ।
कर्ता कोऽत्र महाबाहो संसारेऽसारसागरे ॥ ४ ॥

हे महाबाहो ! असार सागरसंसार में इस दृश्य को इन्द्रजाल के नाईं मैं मानता हूं और इस असार सागरसंसार में कर्ता कौन है ? उसे कहिये ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

कथयामि परं गोप्यमनाख्येयं तु कस्यचित् ।
येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रजायते ॥ ५ ॥

श्रीभगवान्‌जी बोले कि; परमगोपनीय जो कि किसी से कहने योग्य नहीं है उस को मैं कहता हूं जिसके विज्ञानमात्र से सर्वज्ञता उपजती है ॥ ५ ॥

साधु पृष्टं त्वया लोके सदा संजीवकारणम् ।
वैनतेय शृणुष्वाद्य एकाग्रकृतमानसः ॥ ६ ॥

---

१ इन्द्रजाल (इन्द्र=ऐश्वर्य अर्थात् चतुराई) जाल आंखों को ढकना, (जल=ढकना) पु० मन्त्र अथवा औषधी से चीज़ें और तरह से दीखना, बाज़ीगरी, छलकपट, फरफन्द, धोखा ॥

अहो गरुड़जी ! तुम ने बहुत अच्छा पूछा है जो कि सदैव भली भांति जीवों का कारण है उसको आज सावधान मनवाले होकर सुनो ॥ ६ ॥

ऋतुकालन्तु नारीणां त्यजेद्दिनचतुष्टयम् ।
यतस्तस्मिन्ब्रह्महत्या पुरावृत्तसमुत्थिता ॥ ७ ॥

नारियों का ऋतुकाल (मासिकधर्म) चार दिन पर्यन्त त्याग देना चाहिये "यानी ऋतु समय स्त्री से चार दिन संभोग बचाना चाहिये" क्योंकि उसमें पुरातन समय इन्द्रको वृत्रासुरके मारडालने से उपजी ब्रह्महत्या लगी थी उसे उन्होंने चार भागों में बांट दिया था उसका एक भाग स्त्रियों में भी आया है ॥ ७ ॥

प्रथमेहनि चाण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी ।
तृतीये रजकी ज्ञेया चतुर्थेऽहनि शुध्यति ॥ ८ ॥

जिस समय स्त्री रजस्वला हो तो पहले दिन चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, तीसरे दिन धोबिन जानना चाहिये और चौथे दिन शुद्ध होजाती है ॥ ८ ॥

सप्ताहात्पितृदेवानां भवेद्योग्या व्रतार्चने ।
सप्ताहमध्ये यो गर्भस्तत्संभूतिर्मलिम्लुचा ॥ ९ ॥

सात दिवस के अनन्तर नारी पितर व देवताओं के व्रतार्चन में सुयोग्य होती है और जो सात दिन के बीच में गर्भ रह जाता है तो उसकी पैदायश मल कहलाती है ॥ ९ ॥

युग्मासु पुत्रा जायन्ते स्त्रियो युग्मासु रात्रिषु ।
पूर्वसप्तकमुत्सृज्य तस्माद्युग्मासु संविशेत् ॥ १० ॥

पहले के सात दिन छोड़ कर युग्म (सम) रात्रियों में पुत्र पैदा होते हैं और विषम रात्रियों में कन्यायें उपजती हैं इसलिये युग्म रात्रियों में ही नरको नारी से समागम करना चाहिये ॥ १० ॥

षोडशास्तु निशाः स्त्रीणां सामान्याः समुदाहृताः ।
यावच्चतुर्दशी रात्रिर्गर्भस्तिष्ठति तत्र चेत् ॥ ११ ॥

ऋतुकाल से रमणियों के लिये सोलह रात्रियां सामान्य कहलाती हैं उनमें से चौदह रात्रियों तक यदि गर्भ टिक जाता है ॥ ११ ॥

गुणभाग्यनिधिः पुत्रस्ततो जायेत धार्मिकः ।
सा निशा तत्र सामान्यैर्न लभ्येत खगाधिप ॥ १२ ॥

तो उससे गुण व भाग्य का निधान होता हुआ धार्मिक होकर पुत्र उपजता है यानी

उस गर्भ से जो लड़का पैदा होता है तो वह गुणवान् व भाग्यवान् होकर धार्मिक कहाता है हे खगनायक ! उस रात्रि को सामान्य पुरुष नहीं पासक्ते हैं ॥ १२ ॥

पञ्चमेहनि साश्नीयाच्छौक्ल्यमाधुर्यभोजनम् ।
कटुक्षारं च तीक्ष्णं च त्यजेद्यत्नेन भोजनम् ॥ १३ ॥

पांचवें दिन वह स्त्री सफ़ेद मीठे भोजन को करे और कड़ुआ खारा तथा तीखा भोजन उपाय से त्याग देवे ॥ १३ ॥

स्त्रीक्षेत्रमोषधीपात्रं तस्माच्छीतलसेवनम् ।
ताम्बूलं चाथ श्रीखण्डं शुभं च संगमेऽहनि ॥ १४ ॥

स्त्री क्षेत्र होकर ओषधियों का पात्र है इसलिये शीतल वस्तुओं का सेवन करे तदनन्तर संगम के दिन में पान खावे व सिखरन आदि शुभपदार्थों का भोजन करै ॥ १४ ॥

निषेकसमये यादृक् नरे चित्तविकल्पना ।
तादृक्स्वभावसंभूतिर्जन्तुर्भवति पक्षिप ॥ १५ ॥

अहो खगनायक ! गर्भाधान के समय जैसे पुरुष में चित्त लगजाता है वैसीही सन्तान पैदा होती है ॥ १५ ॥

शुक्रशोणितयोर्योगे पिण्डोत्पत्तिः प्रजायते ।
जठरे च स्थितो जन्तुस्तारापत्युश्च विच्युतः ॥ १६ ॥

बीज व रुधिर के संयोग होने पर पिण्ड की उत्पत्ति होती है और चन्द्रमण्डल से गिरा हुआ जीव धान्यद्वारा पेट में टिकजाता है ॥ १६ ॥

चैतन्यबीजरूपो हि पुंशुक्रे च व्यवस्थितः ।
कामं चित्तञ्च शुक्रं च यदा ह्येकत्वमाप्नुयात् ॥ १७ ॥

चैतन्य बीजरूप होकर पुरुष के रेतस में स्थित है काम, चित्त, वीर्य और रुधिर ये जब एकता को प्राप्त होजाते हैं तबहीं गर्भ टिकता है ॥ १७ ॥

रक्ताधिके भवेन्नारी शुक्राधिक्ये भवेत्पुमान् ।
शुक्रशोणितयोः साम्ये गर्भः षण्ढत्वमाप्नुयात् ॥ १८ ॥

रक्त अधिक होवे तो कन्या उपजती है, वीर्य अधिक होवे तो पुत्र उपजता है और जब वीर्य व रुधिर ये दोनों बराबर होते हैं तो गर्भ नपुंसकता को प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

कललं त्वेकरात्रेण बुद्बुदं पञ्चभिर्दिनैः ।

चतुर्दशैर्भवेन्मांसं धातुभिश्च समन्वितम् ॥ १९ ॥

एक रात्रि में कलल होता है, पांच दिनों में बुलबुला सा उठता है और चौदह दिनों में धातु समेत मांस होजाता है ॥ १९ ॥

एकमासे न पूर्णेन पञ्चतत्त्वं च जायते ।
मासद्वये च पूर्णे च त्वचा मेदश्च जायते ॥ २० ॥

एक मास के पूर्ण होने से पांच तत्त्व उपजते हैं दूसरे मास के पूर्ण होने पर खाल और मेदा उपजती है ॥ २० ॥

मज्जास्थीनि त्रिमासेन केशाङ्गुल्यश्चतुर्थके ।
कर्णौ तु नासिका चैव वक्त्रं मासे तु पञ्चमे ॥ २१ ॥

तीन मास के पूर्ण होने पर मज्जा और हड्डियां उपजती हैं व चार मास के पूर्ण होजाने पर केश व अँगुलियां उपजती हैं और पांचवें मास में कान, नाक व मुख उपजते हैं ॥ २१ ॥

कण्ठरन्ध्रोदरं षष्ठे गुदगुह्ये तु सप्तमे ।
अङ्गप्रत्यङ्गसंपूर्णो गर्भो मासे तथाष्टमे ॥ २२ ॥

छठे मास कण्ठरन्ध्र और उदर उपजता है, सातवें मास गुदा व लिङ्ग होता है तथा आठवें मास में गर्भ अङ्ग व प्रत्यङ्गों से पूर्ण होजाता है ॥ २२ ॥

नवमे मासि संप्राप्ते गर्भस्थश्चरति स्वयम् ।
चिकित्सा जायते तस्य गर्भवासं परित्यजे ॥ २३ ॥

नवयें मासके प्राप्त होजानेपर गर्भस्थ प्राणी आपही चलता है और उसको चाहना होती है कि मैं गर्भ का वास कब परित्याग करूंगा ॥ २३ ॥

रक्ताधिके भवेन्नारी पुमाञ्छुक्राधिके भवेत् ।
नपुंसका समे द्रव्ये त्रिविधं पिण्डसंभवम् ॥ २४ ॥

जो रुधिर अधिक होवे तो कन्या उपजती है व वीर्य अधिक होवे तो पुत्र उपजता है और रज व बीज दोनों समान होवें तो नपुंसक होता है इसभांति पिण्डकी उत्पत्ति तीन प्रकार की कहाती है ॥ २४ ॥

शक्तित्रयं विशालाक्ष षट्कोशिकसमाकुलम् ।
पञ्चेन्द्रियसमायुक्तं दशनाडीविभूषितम् ॥ २५ ॥

अहो विशालाक्ष ! तीन शक्तियोंवाला, छह कोशों से व्याप्त, पञ्चेन्द्रियों से संयुक्त होकर दश नाड़ियों से विभूषित होता हुआ देह कहाजाता है ॥ २५ ॥

दशप्राणगुणोपेतं यो जानाति स वेत्ति तम् ।
मज्जास्थिशुक्रमांसानि रोमरक्तबलं तथा ॥ २६ ॥

दश प्राणों के गुणों से संयुक्त देहको जो जानता है वह उसका वेत्ता कहाता है और मज्जा, हड्डी, वीर्य, मांस, रोम और रक्त इनका पुतला है ॥ २६ ॥

षाट्कौशिकमिदं पिण्डे तस्यान्ते पञ्चभूतकम् ।
क्षितिर्वारि हविर्भोक्ता पवनाकाशमेव च ॥ २७ ॥

पिण्डमें यह छह कोश हैं उसके बाद पृथ्वी, जल, अग्नि, पवन और आकाश ये पञ्चभूत हैं ॥ २७ ॥

एभिर्भूतैश्च पिण्डस्तु बद्धः स्नायुनिबन्धनः ।
स्थूलभूता इमे प्रोक्ताः सप्तनाड्योऽन्तरे स्थिताः ॥ २८ ॥

इन पञ्चभूतों से देह जो कि नसोंसे बँधनेवाली है वह बँधी है ये स्थूलभूत कहाते हैं और इसके भीतर सात नाड़ियां भी रहती हैं ॥ २८ ॥

त्वचास्थिनाड्यो रोमाणि मांसञ्चैव तु पञ्चमे ।
क्षितेः पञ्चगुणाः प्रोक्ताः समासेन प्रकीर्तिताः ॥ २९ ॥

खाल, हड्डी, नाड़ी, रोवां और मांस ये पांचवें मास में उपजे हैं ये पांच धरती के गुण संक्षेप से कहे हैं ॥ २९ ॥

लाला मूत्रं तथा शुक्रं मज्जा रक्तं च पञ्चमम् ।
अपां पञ्चगुणाः प्रोक्ता ज्ञातव्यास्ते प्रयत्नतः ॥ ३० ॥

लार, मूत्र, शुक्र, मज्जा (चर्बी) और रक्त ये पांच जल के गुण कहे हैं वे बड़े यत्न के साथ जानना चाहिये ॥ ३० ॥

क्षुधा तृषा तथा निद्रा आलस्यं कान्तिरेव च ।
तेजःपञ्चगुणाः प्रोक्ता ज्ञातव्या हि प्रयत्नतः ॥ ३१ ॥

भूख, तृषा, निद्रा, आलस्य और कान्ति ये पांच तेज के गुण कहे हैं जो कि बड़े यत्न के साथ जानने चाहियें ॥ ३१ ॥

रागद्वेषौ तथा लज्जा भयं मोहस्तथैव च ।
पाणिपादौ गुदा वाचा गुह्यं वायोर्गुणा नव ॥ ३२ ॥

---

१ "पिण्डो बोले बले सान्द्रे देहागारैकदेशयोः । देहमात्रे निवापे च गोलसिह्लकयोरपि । ओणद्रुपुष्पे च पुंसि स्यात्क्लीबमाजीवनायसोः" (इति मेदिनी) ॥

राग, वैर, लज्जा, भय, मोह, हाथ, पांव, गुदा, वाणी ये नव वायु के गुण कहे हैं ॥ ३२ ॥

दर्पश्चिन्ता तु गाम्भीर्यं श्रवणं गमनं क्रमात् ।
आकाशस्य गुणाः पञ्च प्रोक्ताः सर्वत्र योगिभिः ॥ ३३ ॥

अहंकार, चिन्ता, गम्भीरपना, सुनना और चलना ये पांच आकाश के गुण क्रम से सर्वग्रन्थों में योगियों ने कहे हैं ॥ ३३ ॥

श्रोत्रं त्वक् चक्षुषी जिह्वा नासा बुद्धेरितीन्द्रियाः ।
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ ३४ ॥

कान, खाल, नेत्र, जिह्वा और नासिका ये पांच ज्ञानेन्द्रियां कहलाती हैं और इडा, पिङ्गला व तीसरी सुषुम्ना ॥ ३४ ॥

गान्धारी हस्तिनी जिह्वा पूषैव सहजा स्थिता ।
अलम्बुषा कुहूश्चैव शङ्खिनी दशमी स्मृता ॥ ३५ ॥

गान्धारी, हस्तिनी, जिह्वा, पूषा, सहजा, अलम्बुषा, कुहू और शङ्खिनी ये दश नाड़ियां कहाती हैं ॥ ३५ ॥

पिण्डमध्ये स्थिताः प्रोक्ताः प्रधाना दशनाडिकाः ।
प्राणोऽपानः समानश्च उदानो व्यान एव च ॥ ३६ ॥

शरीर के भीतर टिकीहुई प्रधान दश नाडिकायें कही हैं प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान ये पांच प्राण कहलाते हैं यानी हृदय में प्राण, गुदा में अपान, नाभिमण्डल में समान, कण्ठ में उदान और व्यान सर्वशरीर में रहता है ॥ ३६ ॥

नागः कूर्मोऽथ कृकरो देवदत्तो धनञ्जयः ।
केवलं भुक्तमन्नं च पुष्टिदं सर्वदेहिनाम् ॥ ३७ ॥

नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनञ्जय ये पांच उपप्राण[1] कहाते हैं यानी उद्गार (वमन) में नाग, नेत्रों के उघाड़ने में कूर्म, छींकने में कृकर, जँभाई में देवदत्त और मृतक शरीर में धनञ्जय पवन रहता है व केवल खाया हुआ अनाज सब देहधारियों को पुष्टिदायक होता है ॥ ३७ ॥

---

१ उद्गारे नाग आख्यातः कूर्म उन्मीलने स्मृतः । कृकलः क्षुतकृज्ज्ञेयो देवदत्तो विजृम्भणे ॥ न जहाति मृतं वापि सर्वव्यापी धनञ्जयः । एते नाडीषु सर्वासु भ्रमन्ते जीवरूपिणः ॥

संप्रविश्य गुदे सम्यक् पृथगन्नं पृथक् जलम् ।
ऊर्ध्वमार्गं जलं कृत्वा तदन्नं च जलादधः ॥ ३८ ॥

सो वायु गुदा में प्रविष्ट होकर अन्न व जल को न्यारा न्यारा करता है व जलको ऊपर करके अन्नको नीचे कर देता है ॥ ३८ ॥

अग्नेस्त्वधः स्वयं प्राप्तो ह्यग्निं चैव धमेच्छनैः ।
वायुना ध्मायमानोऽग्निः पृथक्किट्टं पृथग्रसम् ॥ ३९ ॥

अग्निके नीचे आपही प्राप्त हुआ प्राणवायु अग्नि को धीरे धीरे जलाता है व वायु से जलाया हुआ अग्नि कीट व रसको न्यारा न्यारा करता है यानी रसको न्यारा करके मैल को अलग कर देता है ॥ ३९ ॥ ग. पु. अ. १९ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

आलयैर्दशभिः किट्टो भिन्नो देहाद्बहिर्व्रजेत् ।
कर्णाक्षिनासिका जिह्वा दन्ता नाभिर्वपुर्गुदम् ॥ १ ॥
नखमाला शिरः शेषं विष्ठामूत्रमनन्तकम् ।
शुक्रशोणितसंयोगात्षाट्कौशिकमुदाहृतम् ॥ २ ॥

श्रीभगवान्जी बोले कि, अहो खगनायक ! कान, नेत्र, नाक, जीभ, दांत, नाभि, लिङ्ग, गुदा, नख और शीश इन दश घरों से निकला हुआ मैल देह से बाहर जाता है यानी अल्प मैल, विष्ठा व मूत्र आदि अनन्त बहते हैं और बीज-रज के संयोग से छह कोशोंवाला देह कहाजाता है ॥ १ । २ ॥

रोमकोट्यस्तथा तिस्रो ह्यर्धकोटिसमन्विताः ।
द्वात्रिंशद्दशनाः प्रोक्ताः सामान्यात्समुदाहृताः ॥ ३ ॥

इस देह में साढ़े तीन करोड़ रोम हैं और सामान्य से बत्तीस दांत कहाते हैं ॥ ३ ॥

विंशतिस्तु नखाः केशाः सप्तविंशतिकोटयः ।
मांसं पलसहस्रैकं सामान्यं देहसंस्थितम् ॥ ४ ॥

बीस नख, सत्ताईस करोड़ केश और एक हज़ार पल मांस है जो कि सामान्य होकर देह में टिका है ॥ ४ ॥

रक्तं पलशतं तार्क्ष्य वक्ष्यते वै पुरातनैः ।
पलानि दश मेदश्च त्वचा चैव ततः समा ॥ ५ ॥

अहो गरुड़जी ! सौपल रुधिर पुरातनों ने कहा है दश पल मेदा है और उसी के बराबर खाल भी है ॥ ५ ॥

पलद्वादशकं मज्जा महारक्तं पलत्रयम् ।
शुक्रं द्विकुडवं[1] ज्ञेयं शोणितं कुडवद्वयम् ॥
श्लेष्मा त्रिकुडवं चोर्ध्वं विष्ठामूत्रं तु तत्समम् ॥ ६ ॥

बारह पल मज्जा, तीन पल महारक्त, दो कुड़व वीर्य, दो कुड़व रुधिर, तीन कुड़व कफ और उसी के समान मल व मूत्र भी है ॥ ६ ॥

बलपिण्डं समाख्यातं ज्ञेयं वै वेदपारगैः ।
ब्रह्माण्डे ये गुणाः सन्ति शरीरे ते व्यवस्थिताः ॥ ७ ॥

देह का बल कहा गया जो कि वेदवेत्ताओं को जानना चाहिये और ब्रह्माण्ड में जो गुण विद्यमान हैं वे सब शरीर में भी टिके हैं ॥ ७ ॥

पातालं पर्वता लोकास्तथान्ये द्वीपसागराः ।
आदित्यादिग्रहाः सर्वे पिण्डमध्ये व्यवस्थिताः ॥ ८ ॥

पाताल, पर्वत, लोक, द्वीप, सागर और सूर्य आदि ग्रह ये सब देह के बीच में व्यवस्थित हैं यानी टिके हैं ॥ ८ ॥

पादाधस्त्वतलं ज्ञेयं पादोर्ध्वं वितलं तथा ।
जानुभ्यां सुतलं विद्धि ह्यूरू चैव महातलम् ॥ ९ ॥

पांव के नीचे अतललोक, पांव के ऊपर वितल, घुटनुओं में सुतल और जांघों में महातल तथा तलातल है ॥ ९ ॥

तथा तलातलं चैव गुह्यदेशे रसातलम् ।
पातालं पादतलयोरेवं लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ १० ॥

गुह्यदेश में रसातल और पादतलों में पाताल लोक है इस भांति सातों लोक प्रतिष्ठित हैं ॥ १० ॥

भूर्लोकोनाभिमध्ये तु भुवर्लोकस्तदूर्ध्वके ।
स्वर्लोको हृदये प्रोक्तः कण्ठमध्ये महस्तथा ॥ ११ ॥

नाभिमण्डल में भूर्लोक, उदर में भुवर्लोक, हृदय में स्वर्लोक और कण्ठ के बीच में महर्लोक कहा है ॥ ११ ॥

---

[1] कुडव=पावसेर को कहते हैं ॥